www.singaporesangam.com

सिंगापुर से निकलने वाली पहली हिन्दी पत्रिका

सिंगापुर संगम

ISSN: 25917773

वर्ष-7,
अंक 26

त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका

अप्रैल-जून 2024 - वर्ष-7, अंक 26

www.singaporesangam.com

सिंगापुर संगम

सिंगापुर से निकलने वाली पहली हिंदी पत्रिका ISSN: 25917773

- वर्ष 7
- अंक 26
- अप्रैल-जून 2024

सम्पादक:

डॉ. संध्या सिंह

तकनीकी सहयोग:

अनमोल सिंह
युवराज आर्यन

आवरण चित्र:

डॉ. पारुल तोमर

संपर्क:

Email: sangam.singapore@gmail.com

Facebook- https://www.facebook.com/singapore.sangam.3 ,

Page- sangam Singapore संगम सिंगापुर sinagpore sangam

Instagram: https://www.instagram.com/**singaporesangamhindi**/?hl=en

YouTube: https://tinyurl.com/**singaporesangamhindi**

Website: www.singaporesangam.com , **Magazine-** https://www.singaporesangam.com/magazines/

सिंगापुर

प्रकाशित रचनाओं के विचार लेखकों के अपने हैं| आवश्यक नहीं कि पत्रिका के संपादक या प्रबंधन सदस्य इससे सहमत हों।
सर्वाधिकार सुरक्षित
© Singaporesangam

सम्पादकीय

सिंगापुर से नमस्कार!

पुस्तक लेखन अगर महत्वपूर्ण है तो उससे भी अधिक विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक ढंग से उस पर लिखी समीक्षाएँ। समीक्षाएँ पुस्तक पढ़ने या दूर रहने को भी साधती है और भविष्य के लिए लेखन की ज़मीन को सींचती है। इस अंक के लिए समीक्षाएँ पढ़ते समय एक ओर पुस्तक के आलोचनात्मक विश्लेषण में कुछ समीक्षकों द्वारा बहुत ही पैनी दृष्टि देखने को मिली है तो वहीं दूसरी ओर कहीं-कहीं आलोचनात्मक विश्लेषण करने के बजाय पूरी कथा या कविताएँ उतार देना या अभिनन्दन ग्रन्थ लेखन शैली दिखाई दी, जिससे बचने की कोशिश ज़रूरी है। आपका सटीक विश्लेषण रचना और रचनाकार दोनों को समृद्ध करेगा।

सिंगापुर संगम ने समीक्षा विशेषांक जब प्रकाशित करने का निर्णय लिया तो उम्मीद से कहीं अधिक समीक्षाएँ प्राप्त हुईं। इतनी विविध समीक्षाएँ प्राप्त होना जहाँ एक ओर सुकून देता है कि पढ़ने की क्रिया भी उसी गति से चल रही है जिस गति से लेखन, वहीं असमंजस की स्थिति भी पैदा कर देता है कि किसे जोड़ें और किसे छोड़ें। सभी समीक्षाएँ इस अंक में शामिल न कर पाने का खेद है। कई सीमाओं में बंधे होने के कारण कई बार बहुत कुछ छोड़ना पड़ता है। सामंजस्य बैठाने का पूर्ण प्रयास किया गया है और आशा है आप सभी इसे सकारात्मक रूप में लेंगे। सभी रचनाकारों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ कि आपने समय निकालकर सिंगापुर संगम के अंक को समृद्ध किया है। भविष्य में भी इसी प्रकार का स्नेह बना रहे!

इस अंक का आवरण चित्र बनाया है भारत से डॉ. पारुल तोमर ने। उन्होंने चिड़िया के माध्यम से चुनने की प्रक्रिया को दर्शाया है और साथ ही हरे रंग से सावन मास के आगमन का राग भी छेड़ा है।

अगले अंक के लिए रचनाएँ, चित्र, पेंटिग आदि आमंत्रित हैं। आपकी प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए बहुत ख़ास हैं अतः आपकी प्रतिक्रियाओं का इंतज़ार रहेगा!

धन्यवाद सहित

डॉ संध्या सिंह

आवरण पृष्ठ

डॉ. पारुल तोमर-भारत

डॉ. पारुल तोमर एक स्वतंत्र लेखिका एवम् स्व-प्रशिक्षित चित्रकार हैं। उनकी कलम एवम् कूची दोनों ही सकारात्मकता की पक्षधर है। इनकी कविताएँ, आलेख, व्यंग्यालेख संस्मरण एवम् पुस्तकों की समीक्षाएँ आदि लेखन राष्ट्रीय स्तर के प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं । इनका एकल कविता संग्रह 'संझा-बाती ' एक चर्चित संग्रह रहा है , इन्होने भारतीय शिक्षा बोर्ड द्वारा प्रस्तावित प्राइमरी कक्षा की पाठ्यपुस्तकों के लिए रेखांकन किया है| सूर सागर की चौपाइयों पर आधारित, १२ बाल कृष्ण आकृतियाँ... कविताकोश के वार्षिक कैलेन्डर 2022 में प्रकाशित हो चुकी हैं| इन्हें इंडिया नेटबुक्स का " कला रत्न सम्मान, साहित्य साधक पर्पल पेन सम्मान, द फेमस सिल्वर अवार्ड आदि सम्मानों से सम्मानित किया जा चुका है|

इस अंक में

लेखक	पुस्तक	समीक्षक	
अरुणा सब्बरवाल	रॉकिंग चेयर (कहानी संग्रह)	भावना गौड़	5
डॉ. जवाहर कर्नावट	विदेश में हिंदी पत्रकारिता	रोहित कुमार हैप्पी	13
कादम्बरी मेहरा	नीला पर्दा (कहानी संग्रह)	डॉ.नूतन पाण्डेय	16
श्रीप्रकाश मिश्र	जो भुला दिये गये (चौरी-चौरा काण्ड पर आधारित उपन्यास)	डॉ. विजय तिवारी	24
प्रो. चन्द्रकला त्रिपाठी	चन्ना तुम उगिहो (उपन्यास)	डॉ.सुवर्णा पाण्डेय	30
विनोद दूबे	ओक्का बोक्का (उपन्यास)	अरुण सुंदरम	34
सुधा ओम ढींगरा	चलो फिर से शुरू करें (कहानी संग्रह)	रेखा भाटिया	39
प्रो. महावीर सरन जैन	भारत की भाषाएँ एवं भाषिक एकता तथा हिन्दी	प्रो. जी ० गोपीनाथन	46
राम सनेही 'विनय'	यक्ष प्रश्न (कहानी संग्रह)	वसीम अहमद नगरामी	48
प्रभात कुमार	हमारे संज्ञान में नहीं आया है (व्यंग्य -संग्रह)	विजय विशाल	52
गोविन्द जोशी	देश के दीवाने	सुनील गज्जाणी	57
दिलीप कुमार पांडेय	उम्मीद की लौ (काव्य- संग्रह)	डॉ०विजयानन्द	59
नंदा पांडेय	मनरँगना (काव्य- संग्रह)	डॉ.कविता विकास	62
सतीशकुमार श्रीवास्तव 'नैतिक'	चलो! अब आदमी बना जाए (ग़ज़ल संग्रह)	डॉ. अंगदकुमार सिंह	66
शिवकुमार राय	पाथफाइंडर्स जर्नी (संस्मरण)	विनोद कुमार दूबे,	68
बसंत चौधरी	वक्त रुकता नहीं (काव्य-संग्रह)	चित्रा गुप्ता	70
प्रतिमा सिंह	सन्देश प्रेम का (काव्य- संग्रह)	डॉ. सविता रानी सिंह	75
चित्रा देसाई	दरारों में उगी दूब (काव्य संग्रह)	डॉ. जया आनंद	77
विजय कुमार तिवारी	कोई दस्तक हुई (कहानी संग्रह)	अनिमा दास	80
नृपेन्द्र अभिषेक नृप	ऊर्जस्वी (आलेख संग्रह)	मोनिका राज	83

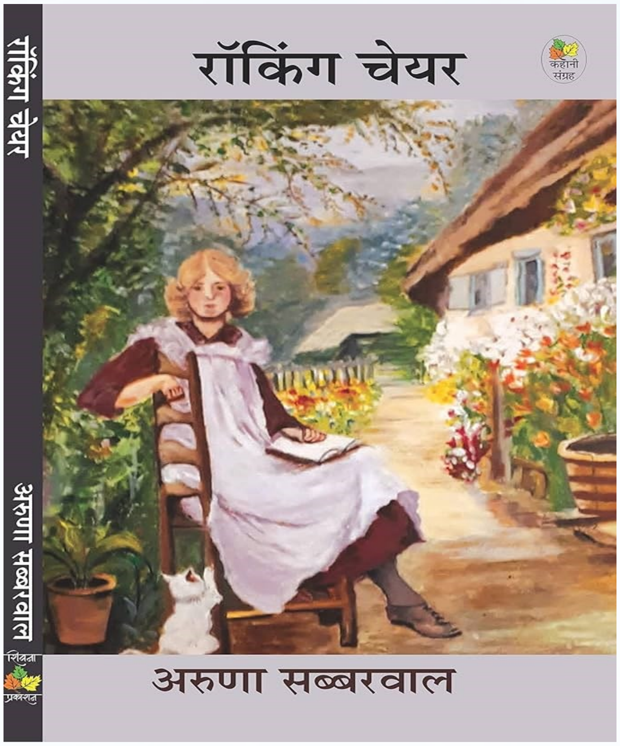

पुस्तक समीक्षा- रॉकिंग चेयर (कहानी संग्रह)

लेखक– अरुणा सब्बरवाल, ब्रिटेन

प्रतिष्ठित प्रवासी साहित्यकार

प्रकाशक- शिवना प्रकाशन

समीक्षक- भावना गौड़, स्वतंत्र लेखन

संपर्क- bhavana.gaur.888@gmail.com

"विविध भावों और संभावनाओं के झूले में झुलाती रॉकिंग चेयर"

भारतीय मूल की लेखिका अरुणा सब्बरवाल वर्षों से लंदन में रह रही हैं, लेकिन भारत की पारंपरिक संस्कृति को उन्होंने बहुत करीब से जाना है, अतः विदेशी आवरण में लिपटी हुई उनकी कहानियों की आत्मा में भारतीयता की झलक मिलती है। इनका कहानी संग्रह "रॉकिंग चेयर" ऐसी पंद्रह कहानियों का संकलन है, जो मुख्यतः लंदन में रहने वाले भारतीयों के जीवन से जुड़ी समस्याओं के हल निकालता हुआ प्रतीत होता है। प्रतिरोधों के प्रति इनका दृष्टिकोण समाधानपरक है। इन्होंने कुछ ऐसे विषयों पर भी अपनी कलम चलाई है, जिनके बारे में बात करना आज भी भारतीय समाज में वर्जित समझा जाता है। इनकी सभी कहानियाँ कुछ कहने का प्रयास करती हैं। कुछ ऐसा, जो किसी न किसी प्रकार से सामाजिक कल्याण की ओर ले जाए, जो लीक से हटकर हो। यह कहानी संग्रह प्रेम की अनेक दास्तानें कहता है, इसमें वह प्रेम नहीं, जो शारीरिक वासनाओं के पूर्वाग्रह से युक्त है, बल्कि यह तो शाश्वत विशुद्ध प्रेम है। थर्ड जेंडर का हृदय भी प्रेम से लबरेज हो सकता है और पुरुष के हृदय में नारी रूप धारण करके भी प्रेम पाने की कामना जन्म ले सकती है, ऐसे अनूठे विषयों पर भी

अरुणा जी ने अपनी कलम चलाई है। वे निषिद्ध विषयों पर भी विचारणीय प्रश्न करने का साहस रखती हैं। प्रेम ही नहीं, विश्वासघात और उपेक्षा की भी दास्तानें इस कहानी संग्रह में मौजूद हैं, जो पाठकों को विभिन्न परिधियों पर विचरण करने का विस्तृत फलक देती हैं। इनकी कहानियाँ, मात्र कहानियाँ न होकर समाज से किए गए प्रश्न हैं, जो कहानियों का रूप धरकर मन मस्तिष्क को झकझोर जाते हैं। कहानियों का परिवेश लंदन का होने के कारण कहानी की भाषा में अंग्रेज़ी वाक्यांशों का प्रयोग स्वाभाविक है। "आउट ऑफ द बॉक्स थिंकिंग" वाली ये कहानियाँ किसी की कमी उजागर करने के लिए उसे कटघरे में नहीं खड़ा करतीं, बल्कि उन कमियों को दूर किए जाने के मार्ग सुझाती हैं। इनकी कहानियों में प्रकृति के सजीव चित्रण इनके प्रकृतिप्रेमी होने का संकेत देते हैं। उम्र के इस पड़ाव में इनकी लेखनी की परिपक्वता संग्रह की हर कहानी में नज़र आती है।

बच्ची के साथ कुकर्म करने वालों के प्रति रोष जताना हो, या समाज में विधवा स्त्री का आक्रोश व्यक्त करना हो, इनकी कहानियाँ प्रचंड स्वर में आवाज़ उठाती हैं और सकारात्मक स्थितियाँ उत्पन्न करके पाठकों में आशावाद का संचार करती हैं। कैंसर के कारण वक्षहीनता की शिकार युवती की पीड़ा हो या दिल की खतरनाक बीमारी का शिकार मासूम शिशु, थर्ड जेंडर की त्रासदी से गुजरता व्यक्ति हो या ट्रांसजेंडर के अकेलेपन का दंश झेलता व्यक्ति, अरुणा जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से हर वर्ग के अनकहे दर्द को उकेरने का प्रयास किया है।

हम मनुष्य प्रकृति की अनुपम कृति हैं। स्त्री हो या पुरूष, दोनों ही समाज की उन्नति के लिए समान रूप से उत्तरदायी हैं। हम निर्जीवों की तरह मात्र परिमाण ही नहीं रखते, बल्कि अपने मस्तिष्क के प्रयोग से परिणाम को बदल देने की भी क्षमता रखते हैं। स्वस्थ मस्तिष्क के रहते कोई जीवन व्यर्थ नहीं हो सकता। हाँ, इतना अवश्य है कि नकारात्मक परिवेश व्यक्ति का आत्मविश्वास डिगा सकता है, लेकिन आत्मीयता का स्पर्श इस नकारात्मकता की दीवार को चूर-चूर भी कर सकता है। अपने ही पति द्वारा "व्यर्थ" कहकर तिरस्कृत की गई स्त्री के संघर्ष को दर्शाती कहानी है, "इंग्लिश रोज़"। यह कहानी जीवन से निराश उन युवतियों के लिए अत्यंत प्रेरणादायक है, जो सामाजिक परिवेश के कारण शारीरिक कमियों को अपनी खुशियों का समापन मानकर जीवन से विरक्त हो जाती हैं।

यह कहानी बताती है कि टूटकर बिखरना सदैव विनाश नहीं, बल्कि नवसृजन का उदघोष भी हो सकता है।

वर्ष 2020 सम्पूर्ण विश्व में कोरोना वायरस के रूप में अपना विनाशकारी प्रभाव छोड़कर गया। आम गृहणी से लेकर बड़े-बड़े डॉक्टर तक, हर कोई अपने-अपने तरीकों से इस महामारी से लोहा लेने में लगे रहे, लेकिन क्रूर कोरोना वायरस के पंजे से कोई नहीं बच पाया। कोरोना की भयावहता को दर्शाती कहानी है, "लाल जोड़ा"। कोरोना वायरस की चपेट में कैसे हँसते-खेलते जीवन पलक झपकते ही काल के गाल में समा गए, सिहरन पैदा करने वाली इस कहानी में लेखिका ने

"सच कहूँ तो मुझे लंदन की नेशनल हेल्थ सर्विस पर अधिक भरोसा है।" इस छोटी सी पंक्ति द्वारा भारतीय स्वास्थ्य विभाग की बदहाली को आईना दिखाने का भी प्रयास किया है।

कई बार हमारे अपने मन की पहेलियाँ भी इतनी उलझी हुई होती हैं कि हम खुद भी उन्हें नहीं सुलझा पाते। जिन लोगों का बचपन रूढ़िवादी परिवारों में बीता हो, उनके लिए जातपात की ऊँच-नीच को न मानने का अपराधबोध मन से निकाल पाना आसान नहीं होता। ऐसे में वे ऊपरी तौर पर कितने भी आधुनिक बनने का स्वांग करें, ऊँची-नीची जाति को लेकर पूर्वाग्रह की कील उनके दिल में चुभती ही रहती है, जिसके कारण वे कभी-कभी वो सब भी करने को विवश हो जाते हैं, जो उनके स्वभाव के बिल्कुल विपरीत होता है। लेखिका ने अपनी कहानी "कील" द्वारा मन में गड़ी ऐसी कील को उखाड़ फेंकने का प्रयास किया है।

अपना घर-परिवार छोड़कर एक अंजान घर को अपना बनाने का सपना आँखों में लिए नारी के लिए कौन सा घर अपना होता है, जहाँ वह सुकून से साँस ले सके? क्या उसका कोई घर होता भी है? खोखले रिश्तों के बंधन में छटपटाते हुए भी अपने अस्तित्व का संघर्ष करती हुई नारियों के दर्द को समर्पित कहानी है, "उसका घर"। अत्यंत भावुक कर देने वाली इस कहानी में मौत के सन्नाटे का विवरण रोंगटे खड़े कर देता है।

"आवाज़ होती पर, पर मर जाती थी, कोई अनुगूंज नहीं बचती थी... यह कैसे पेड़ थे... कैसी हवा थी... हरकत रहित... जिसमें ना सुर ना ताल... उसने खाँस कर देखा... खाँसी भी मर गई थी, जैसे प्रेरणा...

उसकी दोस्त... अब उसकी कभी आवाज़ नहीं आएगी...

इस कहानी में "औरत भी कोई याद रखने की चीज़ है क्या?" कहकर लेखिका ने नारी को अस्तित्वहीन समझने वाले पुरुषों की मानसिकता को एक वाक्य में पिरो दिया है। यह हर उस स्त्री की कहानी है, जो जीवनपर्यंत परिवार के प्रति समर्पित होते हुए भी "यूज़लेस" कहकर पलभर में भुला दी जाती है।

आज विज्ञान ने इतनी प्रगति कर ली है कि शरीर के किसी अंग के काम न करने पर उसे काटकर शरीर से अलग किया जा सकता है और उसकी जगह किसी दूसरे व्यक्ति का अंग प्रत्यारोपित करके व्यक्ति को पूरी तरह स्वस्थ बनाया जा सकता है। दूसरों को जीवन देने के लिए आज अनेक व्यक्ति मरणोपरांत अंग दान करते हैं, लेकिन जब अंगदान किसी जीवित व्यक्ति का करना पड़े, तो क्या गुज़रती होगी उसके जन्मदाताओं पर! सोचकर ही सिहरन होने लगती है। इसी सिहरन में डूबी कहानी है, "छोटा सा शीशमहल".. कहानी पढ़ते हुए नायक और नायिका दोनों का दर्द परत दर परत खुलता जाता है। दर्द नायक का बड़ा है या नायिका का, यह फैसला पाठकों को स्वयं करना होगा।

यूँ तो मज़ाक-मज़ाक में हम जाने-अनजाने न जाने क्या-क्या बोल जाते हैं, लेकिन "शब्द कभी मरते नहीं" कहानी बताती है कि कभी-कभी यूँ ही बोले गए शब्द भी स्मृति पटल पर इतने गहरे अंकित हो जाते हैं कि बरसों बाद भी उनकी वेदना हृदय से नहीं निकल पाती। "अतीत की आवाज़ हमेशा हमारी मौजूदा ज़िंदगी से टकराती रहती है।" प्रारंभ में मासूम सी प्रेमकथा लगने वाली यह कहानी अपने अंदर दर्द की गहरी टीस समेटे हुए है।

प्रवासी बच्चों की ज़रूरतों के लिए जब उनके अभिभावक उनके पास लंदन में रहने जाते हैं, तो वहाँ के सर्वथा भिन्न वातावरण में सामंजस्य बिठा पाना उनके लिए आसान नहीं होता। स्थितियाँ तब और भी बदतर हो जाती हैं जब बच्चे अत्यंत व्यस्त हों और वे अकेले हों। विदेश की ऊपरी चमक -दमक जल्द ही उबाऊ लगने लगती है। वे आत्मग्लानि से भरकर खुद को अपाहिज समझने लगते हैं। ऐसे अभिभावकों के प्रति संतान को उनके दायित्व का एहसास दिलाती हुई कहानी है, "परदेस में पतझड़"। इस कहानी के द्वारा लंदन में सीनियर सिटीजन को मिलने वाली मुफ्त सुविधाओं की भी अच्छी जानकारी दी गई है। ओएस्टर कार्ड, सिटीजन

एडवाइस ब्यूरो जैसी सुविधाओं का वर्णन करते हुए लेखिका ने संकेत दिया है कि ऐसे प्रयास भारत में बुजुर्गों की स्थिति बेहतर बनाने में भी लाभप्रद हो सकते हैं।

जीवन पर्यंत अहंकार में डूबे व्यक्ति के अंतिम समय उसके हृदय में आने वाले अपराधबोध को शब्द देती कहानी है "अनकहा कुछ"। यह कहानी लंदन में मरणासन्न रोगियों के जीवन में खुशियों का संचार करने वाले "हॉस्पिस" की जानकारी देते हुए पाठकों में कौतूहल जगाती है। भारतीय पाठकों के लिए किसी मरणासन्न रोगी को इतनी सुविधाएँ देने वाले हॉस्पिस का विवरण किसी अजूबे से कम नहीं है। --"वहाँ मरीजों की हर सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाता है। भव्य बैठक में आरामदायक सोफे, टेलीविजन, भांति भांति के खेल, चाय कॉफी की सुविधाएँ सभी कुछ तो हैं। बिल्कुल घर जैसे। सबके लिए है।"(कहानी का एक अंश)

इस कहानी का अंत इतना मार्मिक हो गया है कि नायक के नितांत स्वार्थपरक होने की जानकारी होते हुए भी पाठकों को उससे सहानुभूति हो जाएगी।

हम भले ही समानता के कितने दावे करें, लेकिन समाज में लिंगभेद आज भी जारी है। स्त्री और पुरूष का यह टकराव तो सदियों से चला आ रहा है, लेकिन मामला तब और भी पेंचीदा हो जाता है, जब बात समलैंगिकता की हो। ट्रांसवेस्टाइट व्यक्ति शारीरिक रूप से पुरूष होते हुए भी स्त्री की वेशभूषा में रहना पसंद करता है, लेकिन उसका यह स्वाभाविक गुण समाज में सदैव उपहास का ही कारण बना है, अतः वह किसी से अपने दिल की बात नहीं कह पाता। क्या उसका सच जानने के बाद भी कोई उसकी तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ा सकता है? भारतीय समाज के लिए आज भी ऐसे विषय बड़े जटिल हैं, लेकिन लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से ऐसे व्यक्ति को आत्मविश्वास के साथ अपनी बात रखने और पाठकों को उसकी बात समझाने का मौका दिया है।

हर व्यक्ति में कोई न कोई प्रतिभा छुपी होती है, जिसे उसके अभिभावकों का प्रोत्साहन मिले तो उसका व्यक्तित्व निखर जाता है, लेकिन जब अपनों द्वारा ही उसे हतोत्साहित किया जाए, तो उसे प्रतिभा-प्रदर्शन के लिए संघर्ष करना पड़ता है। ज़्यादातर व्यक्ति इस संघर्ष से टूटकर बिखर जाते हैं, लेकिन कुछ जुझारू व्यक्ति हार

नहीं मानते, येन केन प्रकारेण अपनी मंज़िल की राह तलाश ही लेते हैं। अपनी लेखनी की प्रतिभा से अपने परिवार को चकित करने वाली मजबूत इरादों वाली महिला की कहानी है, "महकती बयार"। यह कहानी परिवार के प्रति समर्पित उन महिलाओं को राह दिखाती है, जो परिस्थितियों के विपरीत होने पर स्वयं को पराजित मानकर हताश हो जाती हैं। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से यह संदेश दिया है कि यदि आज आप अपने लक्ष्य तक पहुँच पाने में असमर्थ हैं, तो भी अपने मन के भीतर दबी चिंगारी को बुझने न दें, बल्कि धैर्य और सूझबूझ से कदम बढ़ाते रहें, एक दिन वो चिंगारी, मशाल बनकर स्वयं दैदीप्यमान हो उठेगी।

जीवन में आगे बढ़ने के लिए आत्मविश्वास पहली ज़रूरत है। आत्मविश्वास से लबरेज व्यक्ति बड़ी ही आसानी से दूसरों की सराहना और विश्वास का पात्र बन जाता है, लेकिन जब ऐसा व्यक्ति दूसरों का विश्वास जीतकर उनका विश्वास तोड़ दे, तो?? "नकाब" कहानी में एक ही नायक, अनेक नायिकाओं के साथ विश्वासघात करता है और आपस में एक-दूसरे से परिचित होते हुए भी उन्हें इस बात की भनक तक नहीं लगने देता। सच्चाई सामने आती भी है तो ऐसे मोड़ पर, जब सिवाय बर्दाश्त करने के और कुछ नहीं किया जा सकता।

शीर्षक कहानी "रॉकिंग चेयर" एक लैंगिक असमर्थ व्यक्ति की दर्दभरी दास्तान है। ऐसा व्यक्ति जो समाज के डर से अपनी इस कमी को छुपाने की कोशिश में स्वार्थी रिश्तेदारों की साज़िश का शिकार होता है, क्या होता है जब उसकी खुद की बेटी को ही उसकी इस असमर्थता का पता चलता है? लेकिन कहानी में रहस्य यह भी है कि जब व्यक्ति संतानोत्पत्ति में समर्थ ही नहीं है तो उसकी बेटी आई कहाँ से ? सच्चाई जानते हुए भी समाज की कड़वाहट से बचने के लिए वह बार-बार मुँह पर ताला लगा लेता है। क्या इस भँवर से वह निकल पाता है, ऐसे अनेक प्रश्नों से भरा प्रश्नपत्र पाठकों के सम्मुख रखता यह कहानी संग्रह पूरा पढ़ने के बाद भी काफी देर तक पाठकों का विचारमंथन करता रहता है। संग्रह की अगली कहानी "अंधेरों के बीच" ऑटिज़्म बीमारी से

पीड़ित ऐसी बच्ची की कहानी है, जिसका शरीर तो एडल्टहुड की ओर अग्रसर है लेकिन मानसिक रूप से वह बच्ची ही है। ऐसी बच्ची, जिसे अपने शरीर के प्रति अच्छे-बुरे की कोई समझ नहीं, उसके प्रति स्नेह और धैर्य रखकर उसके भविष्य को अंधकारमय बनने से रोका जा सकता है, लेकिन जब उसके भोलेपन का लाभ उठाकर उसका शोषण किया जाए, तो उस बच्ची को न्याय कैसे मिले? रोंगटे खड़े कर देने वाली इस कहानी में हाइड्रो थेरेपी, एडल्ट ट्रेनिंग सेंटर जैसे उपचारों के बारे में बताया गया है, जो ऐसे बच्चों के लिए उपयोगी हो सकते हैं। यह कहानी बताती है कि ऐसे बच्चे परिवार में रहते हुए भी कितने असुरक्षित होते हैं। जिस संवेदनशीलता के साथ लेखिका ने ऐसे बच्चे की पीड़ा को कहानी का रूप दिया है, वह अवश्य ही पाठकों की आँखें नम कर जाएगी।

भारतीय समाज विधवाओं के प्रति कितना क्रूर रवैया रखता है, इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि पति की मृत्यु के बाद विधवा स्त्री को जीते जी पति की चिता के साथ जलाकर मार डालने को सती प्रथा के नाम से महिमामण्डित किया जाता रहा है। भले ही 1829 से भारत में इसे गैरकानूनी घोषित करने के बाद से इस प्रथा पर रोक लगी है, लेकिन विधवाओं के प्रति आज भी समाज का रवैया उदार नहीं है। व्यर्थ की आशंकाओं से घिरे पुरातनपंथी लोग आज भी विधवा स्त्री को अनेक शुभ कार्यों से दूर रखते हैं। वे इस बात की तनिक भी परवाह नहीं करते कि उनका ऐसा व्यवहार एक स्त्री के आत्मसम्मान को कितनी बड़ी ठेस पहुँचाता होगा। ऐसे लोगों के साथ कैसी युक्ति से काम लेना चाहिए कि साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे, इस बात की सीख देती कहानी है "प्रतिरोध"।

"लानत है ऐसी पढ़ाई पर ... जिसकी रोशनी में इंसान गलत परंपराओं और अंधविश्वासों को मानने से इंकार ना कर सके।" कहकर लेखिका ने आँख मूँदकर रूढ़ियों का निर्वाह करने वालों को कड़ी फटकार लगाई है।

सामाजिक नियम समाज को सुव्यवस्थित रखने के लिए बनाए गए हैं, लेकिन विडंबना यह है कि उन नियमों से बँधे रहने के लिए अक्सर व्यक्ति को अपनी स्वाभाविक इच्छाओं की बलि देनी पड़ती है। अपवाद भले ही मिल जाएँ, लेकिन कमोबेश पुरुष प्रधान समाज में कुर्बानी की उम्मीद महिलाओं से ही की जाती है। लड़कियों को

बचपन से ही ऐसा वातावरण मिलता है कि वे दूसरों के लिए जीने को ही अपने जीवन का लक्ष्य समझने लगती हैं। "उडारी" कहानी आत्मबोध के धरातल का वह यथार्थ है, जो नारी वर्ग के लिए सकारात्मक सोच रखता है और उनके लिए आनंद मार्ग भी खोलता है। हमारे भारतीय समाज में नारी को "देवी" का सात्विक आवरण ओढ़े रहना सिखाया जाता है, भले ही वह नारी रूप में कुंठित होती रहे। क्या ऐसा करना उसके स्वयं के प्रति अन्याय नहीं? उडारी कहानी नारी को स्वयं का अद्भुत साक्षात्कार कराते हुए आत्म-आनंद के साथ जीने का विस्तृत फलक देती है। यह कठोर यथार्थ पर मानवीय संवेदना और प्रेम की कहानी है। जज्बातों के उड़ान की कहानी है। अपनी भावनाओं और सामाजिक बंधनों में बंधी औरत की कहानी है, जो सांसारिक बंधनों को परे रख अपने पंख पसार कर खुले आकाश में उड़ जाना चाहती है।

अरुणा जी का सामान्य प्रसंगों को भी रोचक ढंग से लिखने का अंदाज कहानियों में नई जान डाल देता है। इस कहानी संग्रह "रॉकिंग चेयर" में अनेक साधारण प्रसंग भी उनकी लेखन शैली के कारण विशिष्ट लगने लगते हैं। उदाहरण के तौर पर--

"सुबह के सूरज की तिरछी फाँक ने कमरे में खेलते खेलते उसे जगा डाला।(उडारी)

"टूलिप्स, सफेद, डेज़ी लाल और पीला गुलाब वापिस उसकी तरफ ठीक वैसे ही देखते हैं, जैसे उसकी निगाह को पहचानते हों।"(इंग्लिश रोज़)

"होटल के अपरिचित पलंग पर पड़े, दोनों अपने अपने दुःख समेटे, सोने जागने की बारीक रेखा को एक्दूसरे से छुपाते रहे।"(छोटा सा शीशमहल)

लेखिका"अरुणा सब्बरवाल जी" को "रॉकिंग चेयर" के रूप में सार्थक सृजन के लिए अनंत शुभकामनाएँ--

****

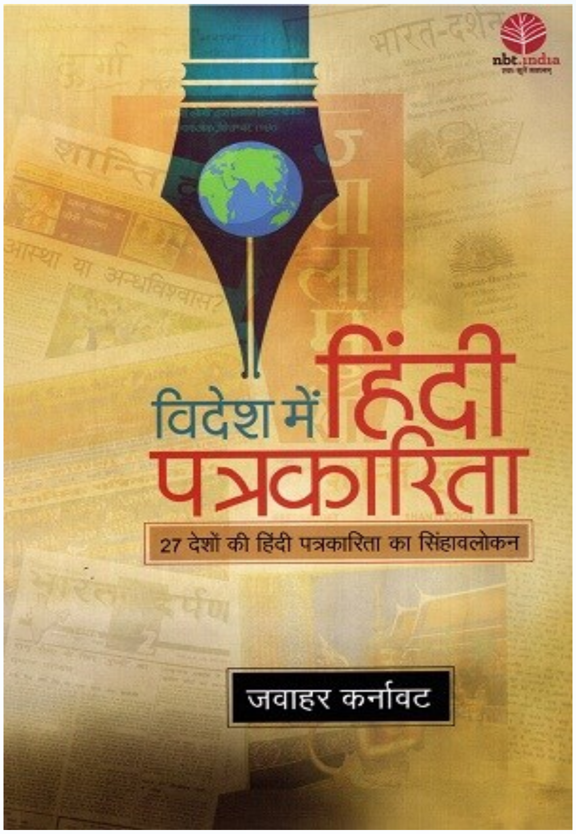

पुस्तक समीक्षा- विदेश में हिंदी पत्रकारिता

(27 देशों की हिंदी पत्रकारिता का सिंहावलोकन)

लेखक- डॉ. जवाहर कर्नावट, भारत , प्रतिष्ठित हिंदी सेवी

प्रकाशक- राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

समीक्षक- रोहित कुमार हैप्पी, न्यूज़ीलैंड ,

इंटरनेट पर विश्व की सबसे पहली हिन्दी पत्रिका 'भारत-दर्शन' के संपादक

संपर्क- editor@bharatdarshan.co.nz

विदेशों में हिंदी भाषा की पत्रकारिता के इतिहास, विकास और वर्तमान स्थिति का एक व्यापक अध्ययन

विदेश में हिंदी पत्रकारिता पुस्तक के लेखक डॉ जवाहर कर्नावट बैंक ऑफ बड़ौदा से महाप्रबंधक के रूप में सेवानिवृत्त हुए हैं। वर्तमान में रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (भोपाल) में प्रवासी भारतीय साहित्य एवं संस्कृति शोध केंद्र के सलाहकार हैं।

विदेश में हिंदी पत्रकारिता पुस्तक विदेशों में हिंदी भाषा की पत्रकारिता के इतिहास, विकास और वर्तमान स्थिति का एक व्यापक अध्ययन है। लेखक, जवाहर कर्नावट ने इस विषय पर कई वर्षों तक गहन शोध किया है। पुस्तक में विदेशों में प्रकाशित होने वाले विभिन्न हिंदी समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का विस्तृत विवरण दिया गया है, साथ ही उनसे जुड़े प्रमुख व्यक्तियों और संस्थानों का भी उल्लेख किया है।

इस पुस्तक के चार प्रमुख अध्याय हैं जिनमें गिरमिटिया देशों में हिंदी पत्रकारिता, उत्तरी अमेरिका और

ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता, यूरोप महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता एवं एशिया महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता सम्मिलित हैं।

गिरमिटिया देशों में हिंदी पत्रकारिता के अंतर्गत मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिदाद-टोबेगो की हिन्दी पत्रकारिता का उल्लेख किया गया है।

उत्तरी अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता के अंतर्गत अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया एवं न्यूज़ीलैंड की हिन्दी पत्रकारिता पर चर्चा है।

यूरोप महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता के अंतर्गत ब्रिटेन, नीदरलैंड, जर्मनी, नार्वे, हंगरी और बुल्गारिया एवं रूस की हिन्दी पत्रकारिता पर प्रकाश डाला गया है।

एशिया महाद्वीप के देशों में हिंदी पत्रकारिता के अंतर्गत जापान, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत और कतर, चीन और तिब्बत, सिंगापुर, श्रीलंका, म्यांमार और थाईलैंड एवं नेपाल की हिन्दी पत्रकारिता से पाठकों का परिचय करवाया गया है।

"विदेश में हिंदी पत्रकारिता" एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रमाणित होगी जो विदेश की हिंदी पत्रकारिता के विकास और प्रसार को समझने में सहायक है। लेखक जवाहर कर्नावट ने इस पुस्तक में अपने व्यापक अनुभवों और ज्ञान को साझा किया है। लेखक ने पुस्तक की भूमिका में लिखा है—

“भारत की हिंदी पत्रकारिता की तरह ही विदेशों में भी हिंदी पत्रकारिता का गौरवशाली इतिहास रहा है। विश्व के अनेक देशों में हिंदी पत्रकारिता की यात्रा कुछ पत्र-पत्रिकाओं के छपने-बँटने तक सीमित नहीं थी। उसका इतिहास भारतीयों की विश्व यात्रा के संघर्ष, पीड़ा और सुखद प्रतिष्ठापन तक के सफर का अहम दस्तावेज है।”

इस पुस्तक में विदेशों में हिंदी पत्रकारिता के विभिन्न पहलुओं का व्यापक परिचय मिलता है। विभिन्न देशों की हिन्दी पत्रकारिता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, प्रकाशनों की जानकारी और अनेक दुर्लभ पत्र-पत्रिकाओं के चित्र भी उपलब्ध करवाए गए हैं। ये जानकारियाँ उपलब्ध करवाने से ‘विदेश में हिंदी पत्रकारिता’ पुस्तक एक महत्वपूर्ण संसाधन बन जाती है, जो हिंदी मीडिया के प्रकाशन और प्रसार के बारे में जानकारी और समझ बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकती है।

पुस्तक में दिए गए तथ्य और संदर्भ विद्यार्थियों, पत्रकारों, और मीडियाकर्मियों के लिए उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त, यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए भी रुचिकर है जो प्रवासी भारतीय समुदायों और उनकी मीडिया संस्कृति के बारे में अधिक जानना चाहते हैं।

इस पुस्तक को हिंदी पत्रकारिता, समाचार और मीडिया अध्ययन में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए एक अत्यंत आवश्यक संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए।

पुस्तक की प्रमुख विशेषताएँ

- विदेशों में हिंदी पत्रकारिता के इतिहास का एक व्यापक और सटीक विवरण।
- विभिन्न देशों में प्रकाशित होने वाले प्रमुख हिंदी समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का विश्लेषण।
- इस क्षेत्र से जुड़े प्रमुख व्यक्तियों और संस्थानों के योगदान का विवरण।
- विदेशों में हिंदी पत्रकारिता के सामने आने वाली चुनौतियों और अवसरों पर चर्चा।

पुस्तक की भाषा

पुस्तक की भाषा सरल और सहज है, और इसे हिंदी पत्रकारिता में रुचि रखने वाले सभी पाठकों द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। पुस्तक पठनीय, रोचक और जानकारीपूर्ण है।

निष्कर्ष

"विदेश में हिंदी पत्रकारिता" हिंदी भाषा की पत्रकारिता के इतिहास और विकास में रुचि रखने वाले विद्वानों, शोधकर्ताओं और छात्रों के लिए एक महत्वपूर्ण संदर्भ पुस्तक है। यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए भी उपयोगी है जो विदेशों में रहने वाले हिन्दी मीडिया और वहाँ के भारतीय समुदाय के बारे में अधिक जानना चाहते हैं।

यह पुस्तक विदेशों में हिंदी पत्रकारिता की समृद्ध परंपरा और विविधता से परिचित करवाती है। यह पुस्तक पाठकों के लिए **विदेशों में हिंदी पत्रकारिता के परिदृश्य** की समझ विकसित करने का एक अवसर है।

****

पुस्तक समीक्षा- नीला पर्दा (कहानी संग्रह)

लेखक– कादम्बरी मेहरा, ब्रिटेन , प्रतिष्ठित प्रवासी साहित्यकार

प्रकाशक- मनसा प्रकाशन

समीक्षक- डॉ.नूतन पाण्डेय

सहायक निदेशक ,केंद्रीय हिंदी निदेशालय

शिक्षा मंत्रालय,भारत सरकार ,नई दिल्ली

संपर्क- pandeynutan91@gmail.com

साहित्यिक मिथकों को तोड़तीं "नीला पर्दा " की कहानियाँ

ब्रिटेन में एक लम्बे समय से प्रवास कर रहीं कादंबरी मेहरा शीर्षस्थ प्रवासी साहित्यकारों की पंक्ति में अपनी सुनिश्चित पहचान रखती हैं | वाराणसी के 'आज' अख़बार से अपने लेखन का प्रारंभ करने वाली कादंबरी मेहरा ने कविता , कहानी, ग़ज़ल उपन्यास आदि साहित्य की सभी प्रमुख विधाओं में बहुरचनाधर्मिता को अभिव्यक्ति दी है| उनके साहित्य में भारतीय सांस्कृतिक परिवेश और पाश्चात्य जीवन के विविध रंगों की खूबसूरती , मूल्यों के क्षरण के प्रति गहरी चिंता और भारतीय संस्कृति के प्रति अटूट लगाव परिलक्षित होता है | वे अपनी लेखनी के माध्यम से जहाँ स्त्री सशक्तिकरण जैसे मुद्दों को धीरता से उठाती हैं, वहीं ज्वलंत और विवादास्पद मुद्दों पर बेबाकी से उत्तर देने का साहस भी रखती हैं | किस्सागोई की अनूठी सहज शैली, भाषाई प्रवाह, अभिव्यक्ति का खास अंदाज़ और शब्दों का अनूठा चयन उनके लेखन की खास पहचान है जो उन्हें औरों से अलग बनाती है |

समीक्षा विशेषांक

अभी हाल ही में कादम्बरी जी का मनसा प्रकाशन से नीला पर्दा कहानी संग्रह आया है जिसे पाठकों ने बेहद पसंद किया है | इस कहानी संग्रह की सबसे महत्वपूर्ण बात ये है कि यह संग्रह परम्परा से थोड़ा हटकर है | कादम्बरी जी ने अपनी कहानियों के लिए जो रहस्य – रोमांच पूर्ण कथ्य चुना है, उसे केंद्र में लेकर इधर बहुत कम कहानियाँ लिखी जा रही हैं | हिंदी साहित्य में हम प्रेमचंद से थोड़ा सा पहले जाकर देखें तो रहस्य रोमांच वाले उपन्यास और कहानियाँ पाठकों की पहली पसंद हुआ करती थीं जिस कारण ये लोकप्रिय भी खूब होती थीं और इनकी बिक्री भी खूब होती थी | ये बात तो अकसर हम सुनते आये हैं कि बाबू देवकी नंदन खत्री के चन्द्रकान्ता संतति जैसे तिलिस्म और रहस्य से परिपूर्ण उपन्यास को पढ़ने के लिए न जाने कितने लोगों ने हिंदी सीखी थी | गोपाल राम गहमरी के जासूसी उपन्यासों का जादू तो लोगों के सर पर चढ़कर बोलता था | लेकिन दुर्भाग्यवश साहित्यकारों और आलोचकों की उपेक्षा के कारण इस तरह के लेखन को बहुत ज़्यादा प्रोत्साहन नहीं मिला और धीरे –धीरे इस प्रकार के लेखन पर विराम सा लग गया | साहित्यालोचकों ने इसे लुगदी साहित्य कहकर इसकी उपेक्षा करनी शुरू कर दी | इस तरह की सोच और अवधारणा के कारण ही इस प्रकार का लेखन एक जोखिम भरा चुनौती पूर्ण काम हो गया | यह सुखद है कि कादंबरी जी ने अपने इस संग्रह के माध्यम से इस जोखिम को उठाने का साहस किया जिसके लिए वे निश्चित ही बधाई की पात्र हैं | मैं यहाँ यह भी उल्लेख करना चाहूँगी कि कादम्बरी जी इस तरह के चुनौती पूर्ण काम करती रहती हैं और इसी प्रकार के कथ्य को आधार बनाकर लिखा गया उनका उपन्यास 'निष्प्राण गवाह' भी अभी कुछ समय पूर्व प्रकाशित हो चुका है जिसे पाठकों का भरपूर प्रेम और प्रोत्साहन मिला है |

अपार जनप्रियता के बावजूद अपराध और रहस्य रोमांच से भरपूर साहित्य के विरोध में आलोचक अक्सर यह तर्क देते दिखाई पड़ते हैं कि यह लेखन साहित्यिक मानदंडों पर खरा नहीं उतरता | आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे आलोचक भी इस प्रकार के लेखन को साहित्य की श्रेणी में रखने में हिचकते दिखते हैं - "इन उपन्यासों का लक्ष्य घटना वैचित्र्य रहा,रस संचार, भाव विभूति या चरित्र निर्माण नहीं | ये वास्तव में घटना प्रधान कथानक या किस्से हैं, जिनमें जीवन के विभिन्न पक्षों के चित्रण का कोई प्रयत्न नहीं,इससे ये साहित्य की कोटि में नहीं आते" | लेकिन किसी समाज को जानने-समझने और

उसके निष्पक्ष विश्लेषण के लिए अपराध साहित्य निस्संदेह एक महत्वपूर्ण जरिया है | पाश्चात्य विचारक कार्ल मार्क्स ने पश्चिम के समाज का अध्ययन करने के लिए इस प्रकार के साहित्य की पुरजोर वकालत करते हुए लिखा था कि "अपराधी केवल अपराध ही पैदा नहीं करता बल्कि वह अपराध संबंधी क़ानून, उन कानूनों के विशेषज्ञ प्रोफ़ेसर और उनकी मोटी–महँगी कानून की किताबें भी पैदा करता है ,साथ ही उसके कारण और प्रेरणा से कला और साहित्य –उपन्यास, कथा, कहानी यहाँ तक की ट्रेजेडी की रचना भी होती है |" इसी मुद्दे को आगे बढ़ाते हुए इटली के क्रांतिकारी विचारक एन्टोनियो ग्राम्शी ने विविध परिदृश्यों में इस श्रेणी के लेखन के महत्त्व को रेखांकित किया है | वहीं कुछ भारतीय आलोचक भी जासूसी और तिलिस्म लेखन की स्वीकार्यता और लोकप्रियता की अनदेखी नहीं कर सके | मैनेजर पाण्डेय तो यहाँ तक कह देते हैं कि "इस प्रकार का लोकप्रिय साहित्य हिंदी के साहित्य संसार की समग्रता की एक ऐसी सच्चाई है जिसके अस्तित्व को अस्वीकार करना भ्रम में जीना है | वह अच्छा है या बुरा, आवश्यक है कि अनावश्यक,समाज के लिए हानिकारक है या लाभकारी –ये सवाल विचारणीय है| लेकिन इन सवालों पर विचार करने से पहले ये स्वीकारना ज़रूरी है कि उसका अस्तित्व है और वह अस्तित्व साहित्य संसार के विशिष्ट नागरिकों अर्थात गंभीर लेखकों की आकांक्षा के विपरीत और अनिच्छा के बावजूद सच है|" (मैनेजर पाण्डेय,साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, हरियाणा साहित्य अकादेमी , पंचकुला ,पृष्ठ-304)

यहाँ पर यह जानना और मंथन करना महत्वपूर्ण है कि आखिरकार इस साहित्यिक वातावरण और सोच के लिए कौन सी अवधारणाएँ मुख्यतः उत्तरदायी रहीं | यदि हम संग्रह की भूमिका में लिखे गए कादम्बरी जी के मंतव्य को गंभीरता से देखें तो ये बात स्वतः स्पष्ट हो जायेगी | अपनी भूमिका में कादम्बरी जी भारतीय और पाश्चात्य लेखन शैली की आपस में तुलना करते हुए लिखती हैं कि अभी तक हिंदी में मुझको एक भी रहस्य कथा लेखक नहीं मिला यद्यपि भारत में अपराध संख्या विश्व के औसत से कहीं ज्यादा है ,जो जासूसी

उपन्यास हम पढ़ते थे वे किसी न किसी पश्चिमी उपन्यास या रहस्य कथा का भोथरा अनुवाद मात्र होते थे | कादम्बरी जी अपने कथन को आगे बढ़ाते हुए कहती हैं कि "भारतीय और पाश्चात्य लेखकों की लेखन शैली में बहुत अंतर है - विदेश में ऐसा साहित्य लिखने वाले बेहद प्रबुद्ध हैं जो अपने विषय का पूर्ण ज्ञान रखते हैं, वे अपने विषय पर बहुत शोध करते हैं, अध्ययन करते हैं उसके पश्चात वे लिखते हैं, दूसरी ओर भारत के लेखक अभी भी वैचारिक कम भावनात्मक साहित्य में खोये रहते हैं ,सामाजिक समस्याएँ ही उनके साहित्य का आधार हैं ,जो सदियों से नहीं सुलझी हैं उनमें एनालिटिकल इंटेलिजेंस की कमी है उनका अधिकांश ध्यान समस्या क्या है पर रहता है ,वे इस पर बात नहीं करते कि समस्या क्यों है |"

लन्दन के वातावरण में पाँच दशक से भी अधिक समय बिताने के बाद कादंबरी जी ने इस अंतर को महसूस किया और इस स्थिति में गुणात्मक सुधार लाने हेतु इस पर गंभीरता से विचार भी किया | यही कारण है कि जब हम कादम्बरी जी की कहानियों से गुजरते हैं तो पाते हैं कि कादम्बरी जी अपने आसपास घटी घटनाओं पर कहानी बुनती हैं तो सबसे पहले वे उसके आसपास की परिस्थितियों का समग्रता से सूक्ष्म निरीक्षण करती हैं उसके पश्चात् अपनी अद्भुत लेखन शैली का प्रयोग करते हुए उसे काल्पनिक विस्तार देती हैं,जिसका परिणाम ये होता है कि घटनाओं की सत्यता तो बची ही रहती है, उसमें निहित रोचकता भी पाठक को अंत तक बांधे रखती है| कहानी लेखन की यह विशेषता उपर्युक्त संग्रह की पर्दाफाश, नीला पर्दा, प्यार का सौदा और अभी नहीं इन चारों कहानियों में प्रत्यक्ष है |

कादम्बरी जी की कहानियाँ गढ़ने की एक और खासियत उनका किसी आपराधिक घटना के प्रति खास तरीके से किया जाने वाला ट्रीटमेंट है | वे किसी अपराध को सिर्फ एक घटना की तरह नहीं देखतीं और न ही उसे एक घटना मानकर लिखती हैं बल्कि उनके मस्तिष्क में अपराध मनोविज्ञान की सूक्ष्म से सूक्ष्म बारीकियाँ होती हैं जिनकी समग्रता को लेकर वे अपराधी और उसके सम्पूर्ण परिवेश को पाठक के सामने रखती हैं | कादम्बरी जी इतने पर ही नहीं रुकतीं बल्कि वे इससे भी आगे जाकर सारी

आपराधिक परिस्थितियाँ को सूक्ष्मता से मनोविश्लेषित करती हैं और फिर अपराध के पीछे निहित उस उद्देश्य को सामने लाती हैं जिस कारण कोई अपराधी अपराध करने की ओर प्रवृत्त होता है |

समाज की यह सामान्य अवधारणा यह है कि अपराध की गुत्थी सुलझाना विधि व्यवस्था के अंतर्गत आता है | एक मायने में यह सत्य भी है , लेकिन उसी अपराध को जब कोई साहित्यकार कागज़ पर उतारता है तो अपराधी के मनोविज्ञान को पकड़ना और उसके माध्यम से सामाजिक जागरूकता उत्पन्न करना उस साहित्यकार का साहित्यिक प्रयोजन बन जाता है | कादम्बरी जी भी ठीक इसी तरह अपनी कहानी के चरित्रों की, उनके सत्य की समग्र और संश्लिष्ट तस्वीर अपने पाठकों के सामने प्रस्तुत करती हैं और कुछ सवाल और मुद्दे भी उठाती हैं , जिन पर किसी भी सभ्य समाज को विचार करने की आवश्यकता है | घटनाओं को देखने का यही नज़रिया और अपराध को सुलझाने की वैज्ञानिक सोच कादम्बरी जी की कहानियों को सतही अपराध कहानियाँ बनने से बचा ले जाती हैं और जिस कारण से कोई कृति साहित्यालोचकों की गंभीर पारखी विश्लेषण के दायरे में आने से वंचित रह जाती है ।

किसी भी आपराधिक जाँच की प्रक्रिया मूलतः तथ्य पर आधारित्त होती है और तथ्य की अनुपलब्धता कई अवसरों पर सत्य की सापेक्षता पर भारी पड़ जाती है | कई बार जाँच में ऐसे सूत्र मिलते हैं जो निर्दोष को गुनहगार सिद्ध करते हैं | ऐसी स्थिति में कानून सबूत को प्राथमिकता देता है जिनके आधार पर बेगुनाह को सजा दे दी जाती है और तथ्यों के अभाव में असली अपराधी सजा से बच जाता है | कादम्बरी जी अपनी कहानियों में अपराधी को इस तरह की छूट लेने का अवकाश नहीं देती, अपराधी लाख चतुराई कर ले, या चाहे अपराध को कितने भी नियोजित या व्यवसायिक ढंग से क्यों न कर ले , वह बच नहीं पाता | कादम्बरी जी के अधिकंश चरित्रों की विशेषता है कि वे किसी भी मामले को मात्र पुलिस की सामान्य सी जाँच रिपोर्ट नहीं बनने देते ,जहाँ फाइल को बंद करने की हड़बड़ी देखने को मिलती है | इसके विपरीत उनके पात्रों की कर्तव्यनिष्ठा, बौद्धिक क्षमता ,तार्किक समाधान ,फोरेंसिक डिटेल्स और सूझ बूझ गुत्थी को

सुलझाने के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होती है | उनकी अधिकांश कहानियों में ऐसी स्थितियाँ बनती हैं कि जब क्राइम को सुलझाने के सभी रास्ते बंद हो जाते हैं और केस फाइल बंद करने की स्थिति आ जाती है, तभी अकस्मात् घटनाएँ कुछ इस नाटकीयता से घटती हैं कि अपराधी शक के दायरे में आ ही जाता है और पकड़ा जाता है | कादम्बरी जी कई बार इस तरह का सीन क्रिएट करने के लिए अलौकिक शक्तियों का भी सहारा लेती हैं और जब पाठक को पता चलता है कि असली सबूत तक ले जाने में इन्स्पेक्टर की मदद मृतात्मा ने स्वयं की थी तो वह हतप्रभ ,हक्का बक्का रह जाता है | कादम्बरी जी परालौकिक मान्यताओं को स्वयं मान्यता नहीं देतीं बल्कि वे उसे पढ़ने वालों के विवेक पर अनसुलझा छोड़ देती हैं | उनकी शीर्षक कहानी का एक छोटा सा अंश दृष्टव्य है ---- ----- जॉन और डोरा के ड्राइंग रूम में बैठकर डेविड क्रिस्टी आराम से सारी कहानी सुना रहा था | मॉयरा और उसकी बीवी भी वहीं थी |

"जॉन,तुम सचमुच मानते हो कि वह आत्मा तुम्हें ढूंढते हुए वहाँ आई थी ?"

" अरे ,मैं कैसे विश्वास दिलाऊं तुम सबको | डेविड जितनी बार तुमने कहा कि मैं यह केस बंद कर रहा हूँ ,उतनी बार उसके आने का मुझको अहसास हुआ | तुम मानो या न मानो पर मुझे अब और भी तसल्ली हो गई है कि वह सब मेरा भ्रम नहीं था |ज़रा सोचो,जबसे उसके हत्यारे ने उसे जंगल में फेंका मैं पहला व्यक्ति था जिसने उसे देखा और उसक बारे में बताया | शायद वह अपने शरीर में बैठी रही मदद मांगने के लिए और जैसे ही मैं मिला वह मेरे पीछे हो ली | वह मुझसे बार-बार विनती कर रही थी ,इस पर मुझे पूरा विश्वास है,तुम इसे मेरा पागलपन समझते हो तो समझो |"

"नहीं जॉन,कम से कम मैं इसे तुम्हारा पागलपन नहीं समझता |"

"कैसे बोल रहे हो अब ,"डोरा उपहास में बोली | तुम्हीं ने तो कहा था कि यह सब जॉन के उत्तेजित होने के कारण कल्पना का ताना बाना है |"

" कहा था,ज़रूर कहा था ,मगर उसके बाद जो कुछ घटा वह कम विस्मयकारी नहीं है,बताता हूँ |" (पृष्ठ-112)

किस्सागोई की शैली कादम्बरी जी के व्यक्तित्व की खासियत है जो उनके लेखन में स्पष्टतया झलकती है | कादम्बरी जी घटनाओं की तारतम्यता बनाये रखते हुए कुछ इस तरह से कहानी बुनती हैं कि उनमें रोचकता का रस तो

मिलता ही है उसमें परंपरागत कहन का आनंद भी भरपूर मिलता है ,यह विशेषता संग्रह की सभी कहानियों में भरपूर है | जबरदस्त उत्सुकता और रहस्यमयता से बांधकर वे पाठकों को बड़ी ही स्वाभाविकता से कहानी के अंत तक ले जाती हैं और एक बैठक में ही कहानी पढ़ने को विवश कर देती हैं | ये कादम्बरी जी की खूबी है कि वे रहस्य सुलझाने के लिए कोई भी सिरा पाठकों के हाथ में नहीं देती ,बल्कि रहस्य को बनाए रखने के लिए बीच-बीच में कुछ ऐसे दृश्य और पात्र भी उपस्थित करती जाती हैं जिससे पढ़ने वाला अंत तक सही अपराधी तक पहुँच नहीं पाता और उसका कुतूहल अंत तक बना रहता है | कादम्बरी जी की कहानियों में रचा गया रहस्य क्षणिक उत्तेजना पैदा करने वाला सायास निर्मित रहस्य नहीं होता ,बल्कि वह कथा में गुंथा कुछ इस तरह का ताना-बाना होता है जो सम्पूर्ण घटनाक्रम को रहस्योत्पादन की एक विस्तृत और क्रमबद्ध प्रक्रिया बना देता है ।

कादम्बरी जी भारतीय पृष्ठभूमि से आती हैं ,जहाँ उन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग बिताया है, वे भारतीय समाज ,यहाँ के पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं की स्थिति, अपराध के विभिन्न कारणों और उनके मनोविज्ञान से भली भांति परिचित है | आप ब्रिटेन में भी पाँच दशकों से भी अधिक समय से रह रही हैं इसलिए यहाँ के सामाजिक परिवेश, लोगों की मनोवृत्तियों, कुप्रवृत्तियों ,मनोरोगों और मानसिक असंतुलन के विविध कारणों से भी भली भांति वाकिफ हैं | हर समाज के अपने नियम होते हैं , भले ही वे लिखित हों या अलिखित, लेकिन ऐसा कोई समाज नही , जिसमें इन नियमों का अतिक्रमण नहीं होता , यही कारण है कि अपराध हो या अपराधी, किसी का भी अपने सामाजिक संदर्भों से काट कर मूल्याँकन संभव नहीं है। यही कारण है कि संग्रह की दो कहानियाँ भारतीय और दो पाश्चात्य समाज से ली गई हैं | इन दोनों समाजों के वास्तविक स्वरूप की झलक ,उसकी छाया हम कादम्बरी जी की कहानियों में देख सकते हैं | समाज से उठाई गई ये कहानियाँ कहीं-कहीं थोड़ी पेंचीदा होने के बावजूद कमोबेश विश्वसनीय लगती हैं |

चूँकि कहानियों की पृष्ठभूमि में ब्रिटेन और उसके आसपास के शहर हैं इसलिए स्थान –स्थान पर सम्बद्ध देशकाल और वातावरण की छाया देखी जा सकती है |

पाश्चात्य परिवेश,पृष्ठभूमि,जीवन-शैली,रहन–सहन,आचरण आदि को लेखिका समस्त घटनाक्रम में अपने साथ बांधकर चलती है और यथास्थान चतुराई से उसका उपयोग भी करती है| कहानियों के घटनाक्रम को स्वाभाविक गतिमयता और प्रवाह देने के लिए जिस भाषा की अपेक्षा होती है,लेखिका ने सर्वत्र उसी प्रकार की भाषा को अपना प्रभावी टूल बनाया है| घटनाओं के वर्णन करते समय लेखिका ने कभी शुद्ध संस्कृत निष्ठ,कभी सहज–सरल और कहीं तद्भव,देशी शब्दों और मुहावरों आदि का यथानुकूल प्रयोग किया है | भिन्न-भिन्न जगहों पर परिवेश के अनुकूल भिन्न–भिन्न भाषाओं का प्रयोग लेखिका के भाषा पर असाधारण अधिकार को प्रदर्शित करता है |

रहस्य रोमांच और जासूसी कहानियों को पढने में रुचि रखने वालो को कादम्बरी जी की ये कहानियाँ निश्चित ही निराश नहीं करेंगी| ऊपर जैसे चर्चा भी हुई कि अपराध-कहानियाँ भी हमारे समाज की वास्तविकता का एक हिस्सा हैं , इसलिए वे भी आलोचकीय मानदंडों पर गंभीर परख की मांग करती हैं | कादम्बरी जी एक लम्बे समय से इस प्रकार के लेखन को साहित्यिक आलोचनाओं की परिधि के अंतर्गत लाने के लिए प्रयत्नशील हैं | बेशक ,कादम्बरी जी का यह प्रयास आलोचकों को उनके उपेक्षा भाव पर पुनर्विचार करने के लिए विवश अवश्य करेगा |

****

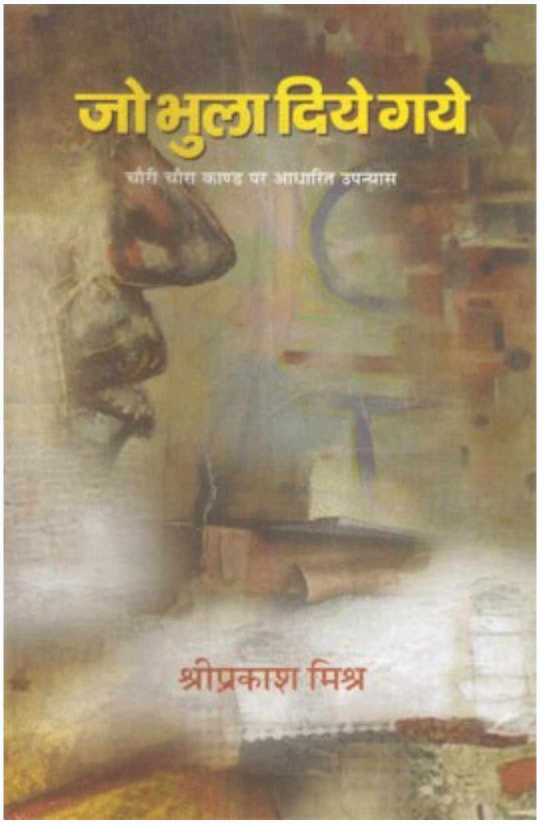

पुस्तक समीक्षा- जो भुला दिये गये (चौरी-चौरा काण्ड पर आधारित उपन्यास)

लेखक– श्रीप्रकाश मिश्र , भारत , प्रतिष्ठित साहित्यकार

प्रकाशक- लोकभारती प्रकाशन,प्रयागराज

समीक्षक- डॉ. विजय तिवारी, भारत, स्वतंत्र लेखन

संपर्क- vijsun.tiwari@gmail.com

स्वतंत्रता आंदोलन के काल-खण्ड के चौरी-चौरा काण्ड की यथार्थ अभिव्यक्ति-'जो भुला दिये गये'

प्रयागराज के श्रीप्रकाश मिश्र जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन पूरी सक्रियता के साथ हिन्दी साहित्य की सेवा में समर्पित किया है और उनका लेखन गम्भीर, शोधपरक व श्रमसाध्य है। उन्होंने प्रायः हर विधा में लिखा है। ऐसे गम्भीर लेखक पर चिन्तन करना मेरी सीमा, सामर्थ्य से बाहर है। उन्हें मैंने 'उन्नयन' पत्रिका के संपादक के रूप में 30-32 वर्षों पूर्व देखा था और मेरी कुछ कविताएँ भी छपी थीं। अब तक उन्होंने 30 से अधिक पुस्तकें लिख डाली हैं और आज भी पूरी तन्मयता से साहित्य-सृजन में लगे हुए हैं। मैंने उनकी अनेक पुस्तकें बड़े ही मनोयोग से पढ़ी हैं और उन पर समीक्षात्मक लेखन किया है।

भारत के उत्तर-पूर्व राज्यों पर आधारित उनका 'नदी की टूट रही देह की आवाज़' जैसा गम्भीर, शोधपरक और विस्तृत उपन्यास में उनके श्रमसाध्य कार्य को देख हर कोई चमत्कृत हो सकता है। भारत सरकार की उच्च प्रशासनिक सेवा में रहते हुए हिन्दी के लिए इतना कुछ कर लेना असम्भव नहीं

तो सरल भी नहीं है। देश में चल रहे जीवन्त और समकालीन मुद्दों पर उनकी पुस्तक "बहस के मुद्दे" पढ़ने और समझने योग्य है। लोग उनसे सहमत-असहमत हो सकते हैं परन्तु उनके लेखन को नकार नहीं सकते। उनकी विशेषता है,वे उन स्थानों पर स्वयं जाते हैं, अनुभव करते हैं,शोध करते हैं और फिर गम्भीरता से लिखते हैं। आज हमारे देश में बहस के मुद्दे और सरोकार बदले हुए हैं, स्थितियाँ खतरनाक होती गयी हैं और लोग विभिन्न धाराओं में बंटते गये हैं। चिन्तकों को मूल्यों की चिन्ता करनी चाहिए न कि इस धारा या उस धारा की। अक्सर लोग भूल जाते हैं, हमारा इतिहास केवल 1947 से शुरु नहीं होता या मात्र बारह-तेरह सौ सालों का नहीं है। हमारी सभ्यता-संस्कृति बहुत प्राचीन है और जीवन-मूल्यों की चिन्ता आदिकाल से होती रही है। उसे नकारना ना तो उचित है और ना ही संभव क्योंकि संवाहक शक्तियाँ सक्रिय रहती ही हैं और कभी सुषुप्ति की अवस्था में ,कभी जागृति में अपना कर्तव्य-निर्वहन करती रहती हैं। तलवार या अहंकारी सत्ता के बल पर हुए बदलाव स्थायी नहीं होते,उन्हें स्थानापन्न करने नयी चेतना के साथ नयी सत्ताएँ जन्म लेती हैं। टिकता वही है जो मानवीय-मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध होता है। 'नदी की टूट रही देह की आवाज़' और 'बहस के मुद्दे' जैसे लेखन में लेखक को ऐसे सवालों से उलझते देखा है और यथार्थ चित्रित करते हुए भी।

उन्हीं श्रीप्रकाश मिश्र जी की औपन्यासिक विधा में छपी 580 पृष्ठों की सघन व भारी-भरकम पुस्तक "जो भुला दिये गये" मेरे सामने है। किसी साहित्यकार की राजनीतिक चेतना साहित्य में बदलती है तो ऐसे उपन्यास पाठकों को मिलते हैं। निश्चित ही उन्हें भारत का सौ-डेढ़ सौ सालों का इतिहास बेचैन करता रहता है और वे उसकी जड़ तक जाना चाहते हैं। सत्ता का चरित्र देखते हैं, जन-मानस को समझते हैं, परिस्थितियों की विवेचना करते हैं और मानवीय-मूल्यों के पतन पर चिन्ताएँ जताते हैं। हर सजग लेखक का यही दायित्व है और मिश्र जी अपने हिस्से की ज़िम्मेदारी पूरी ईमानदारी से निभाना चाहते हैं।

यह उपन्यास समाज के हर वर्ग का मुद्दा उठाता है और घट रही घटनाओं के साथ सामाजिक जीवन, राजनैतिक चेतना, अंग्रेज़ों द्वारा अत्याचार,शोषण और जन भागीदारी प्रस्तुत करता है। भारतीय जनमानस जातियों में,धर्म और पन्थों में

बंटा हुआ है। बाहरी शक्तियाँ इन्हीं के बीच भेद-मतभेद जगाकर शासन तंत्र चलाती हैं। श्रीप्रकाश मिश्र जी धरातलीय संरचना, प्राकृतिक दृश्यावली, लोगों का रहन -सहन, जीवन-संघर्ष और राष्ट्रीय चेतना जैसे बिन्दुओं को अपने लेखन में शामिल करते हैं। केवल घटनाओं की जानकारी ही नहीं देते बल्कि उसके पीछे के कारणों और मनोवैज्ञानिक चिन्तन को समझना, समझाना चाहते हैं। सत्ता का अपना तरीका होता है, वह सुख भोगती है और शासन करती है। अंग्रेज़ भी यही करते थे और बाद की सरकारें भी उन्हीं मार्गों पर चलती रहीं। सत्ताएँ जनकल्याण की बातें मजबूरी में या दिखावे के लिए करती हैं। राज्य की कल्याणकारी संकल्पनाएँ राजनीति शास्त्र की पुस्तकों में हैं जिसे विघालयों में पढ़ाया जाता है।

पडरौना में एक अस्पताल था, वह भी राजा का। मजदूरों को दवा नहीं मिलती थी, डॉक्टर और दवाई राजा और राजपरिवार के लिए भी पर्याप्त नहीं था। स्वास्थ्य सम्बन्धी स्थितियों का वीभत्स दृश्य उपन्यास के शुरु में चित्रित हुआ है। डॉक्टर पासबाबू के नाम से जाने जाते थे। आयोडीन की कमी के चलते सबको घेघा की बीमारी थी, सबको फिलपाँव और जननांगों में सूजन की समस्या थी। तत्कालीन समाज में बदहाली, बीमारी ही नहीं भुखमरी की भी समस्या थी और लोगों का जीवन विपन्न था।

हरबन स्वयं को सुपीरियर रेस का मानता है, घोड़े को बार-बार चाबुक फटकारता है, उसे राजबली गोविन्दराव से चिढ़ है। कुहासे के बाद कमजोर सूरज को देख उसे कोई कविता याद आती है, उस पूरे प्रान्तर को देख वह मुग्ध हो उठता है। मिश्र जी ने वहाँ की बोली, भाषा और शब्दावली सहित धरातलीय संरचना का यथार्थ चित्रण किया है। इसमें उर्दू भी है, भोजपुरी,अंग्रेजी और हिन्दी तो है ही। राजत्व,जातिगत ज़मींदारी और प्रजा का अपना -अपना हिसाब-किताब है। राजा स्वयं को क्षत्रिय कहता है परन्तु है कुर्मी। लाट साहब ने नजराना लेकर बड़े भाई को क्षत्रिय राजा पडरौना और छोटे भाई को क्षत्रिय राय बहादुर जगदीशपुर की सनद दे दी है। निरधिन राम ने खंजड़ी पर अन्तिम थाप दी, ढेबर ने चिलम सुलगा ली और रस्सी की आग से भाँग जल उठी है। सभी जुठारी चिलम प्रसाद के रूप में ग्रहण करने लगे हैं,कहते हैं, चिलम जूठी नहीं होती, साफी होती है।

स्थानीय भाषाओं और बोलियों में संवाद और चित्रण में तत्कालीन समाज, गाँव, ज़मींदारी, गरीबी और कर्ज में डूबी ज़िन्दगी के यथार्थ दृश्य उभरते हैं। पात्रों के मनोविज्ञान को समझना,कहानी में ढाल लेना और इतने अधिक पात्रों को सम्हाले रहना कम नहीं है। नाम लेखन में त्रुटि देखने को मिलती है। भुवनेश्वर मिश्र का अपनी ज़मींदारी वाले गाँव की यात्रा का रोचक चित्रण हुआ है। वे लिखते हैं,"शासन डण्डे से चलता है, सम्मान से नहीं।" ज़मींदारी की कर वसूली के लिए करिया पण्डित आ धमके हैं। ज़मींदार के स्थानीय कारिंदा कोदई शुक्ल का चरित्र देखते बनता है। करिया पण्डित किताब पढ़े हैं,आदमी नहीं। कोदई ने किताब नहीं पढ़ी है,आदमी पढ़ा है। उसे पता है,किताब और आदमी की टक्कर में किताब हार जाती है। उपन्यासों में, लेखों और इतिहास में ज़मींदार ऐसे ही बोलते थे, प्रजा को गाली देते थे और अत्याचार करते थे। हरबन अंग्रेज़ ज़मींदार है, उसने गोविन्दराव के रैयत नगुवा की ज़मीन हड़प ली है। यह सीधी चुनौती है। तत्कालीन सामाजिक अन्तर्विरोधों का मिश्र जी ने गहरा अध्ययन किया है। गांधी जी कहते हैं-समूह में शक्ति है। कमजोर का साथ कोई नहीं देता। हरबन गांधी को गैंडिया कहता है और व्यंग्य कसता रहता है। अंग्रेज़ से सीधी टक्कर कोई नहीं चाहता, मरेंगे तो नेटिव ही, चाहे इधर के हों या उधर के।

मिश्र जी ने उपन्यास के ताने-बाने को ऐसे बुना है मानो उन परिस्थितियों, दृश्यावलियों, लोगों के संघर्ष,षड्यन्त्र और चरित्रों की मानसिकता को स्वयं देखा और अनुभव किया है। करिया पण्डित जब से सिधुआ गाँव से लौटे हैं, उनका मिजाज बदल गया है और अब वे बहुत कम बोलते हैं। धर्मपुर की रिश्तेदारी से न्यौता आया, उन्होंने करिया पण्डित को ब्रेसलेट धोती की नई जोड़ी, सोने के बटन लगे दो मलमल के कुर्ते देकर भेजा और बोले,"वहाँ ऐसे रहना कि लगे भुनेसर मिसिर के पोते हो।" करिया पण्डित अपने तरीके से यात्रा करते हैं। मिश्र जी ने शोध के आधार पर आठ भगवती स्थानों की चर्चा की है जिसके केन्द्र में विन्ध्याचल की भवानी हैं। शीतला माता के प्रकोप ने गाँव के गाँव उजाड़ दिये,परिवार के परिवार लय हो गये। करिया ने मामा से रोते हुए कहा,"मेरे लिए छौना न चढ़ाओ। मैं ऐसे ही ज़िन्दा रहूँगा।" बड़ा ही मार्मिक और भावनात्मक चित्रण किया है श्रीप्रकाश जी ने। करिया पण्डित के बहाने वे मानवीय संवेदनाओं को उकेरने की बार-बार कोशिश करते हैं। पिजावा पुल के पास सुमेर और पंडित, दोनों के बीच का

संवाद रोचक है,छूत-अछूत की अतिशयोक्ति पूर्ण चर्चा हो रही है। यह कोई पंथी मानसिकता का प्रभाव हो सकता है। मिश्र जी ने एक-एक प्रसंग पर विस्तार से लिखा है, संवेदना, करुणा, व्यंग्य, आदर-सत्कार और तिरस्कार सारे भाव खुलकर उभरे हैं। कलाधर मिसिर उर्फ करिया पण्डित और मोल्हऊ पाण्डे के बीच के संवाद में गांधी जी के असहयोग आंदोलन की चर्चा हुई है। करिया पण्डित वहीं से गोरखपुर की राह पकड़ लेते हैं।

अंग्रेज़ों ने चाय पीने का चलन शुरु किया और आज पूरी दुनिया इसकी लत में है। मंच से कहा जा रहा है-उन्होंने तुर्की के खलीफा की सत्ता छीन ली है, संघर्ष करना है और हिन्दुओं के नेता गाँधी जी हमारी मदद कर रहे हैं। हिन्दू हमारी मदद करें। हमारे आपसी सम्बन्ध जो हों,आपसी झगड़े जो हों,उन्हें दरकिनार कर, एकजुट होकर अंग्रेज़ों से निपटना है। उनसे जीतकर हम आपसी मसले सुलझा लेंगे। करिया पण्डित चकित और उत्साहित हैं। मिश्र जी हर प्रसंग को सूक्ष्मता से स्थानीय भाषा में गूँथते हुए विस्तार देते हैं। मिश्र जी पूरे उपन्यास में व्यंग्य के साथ बार-बार सच्चाई का पंच मारते हैं। करिया पण्डित की बात पर कि देशी लोगों की अदालत बनेगी, मोल्हऊ पाड़े पूछते हैं,"देसी आदमी कभी न्याय करता है?" इस न्याय प्रसंग चर्चा पर करिया पण्डित चकित हैं और नाना तरह से उत्सुक हो रहे हैं। सारा चित्रण मिश्र जी व्यंग्य-वितृष्णा के साथ करते हैं और भीतर जमे विरोध को प्रदर्शित करने से नहीं चूकते। हनुमान स्वामी जी के साथ संवाद रोचक है। कांग्रेस के बारे में सुनकर करिया भकुआ गये हैं। मोल्हऊ पाड़े करिया से कहते हैं,"बाबू अखबार पढ़ते रहना और बड़े लोगों का भाषण सुनते रहना।"

अपने 'पुरोवाक्' में मिश्र जी इस उपन्यास को लेकर निष्कर्ष देते हुए इतिहास पर गम्भीर प्रश्न उठाते हैं-"चौरी -चौरा काण्ड को कांग्रेसियों ने इतिहास के बाहर कर दिया, क्योंकि उसके कारण गांधी जी ने अपना आंदोलन वापस ले लिया था। क्रान्तिकारियों ने उसे बाहर कर दिया क्योंकि उसमें कोई नामी तथाकथित क्रान्तिकारी शामिल नहीं था। अंग्रेज़ों ने बाहर कर दिया क्योंकि वह उनकी सत्ता को सीधे ललकार गया था।

दुखद यह है कि उसे जन ने भी बाहर कर दिया जबकि वह सबाल्टर्न की दृष्टि से हुआ आज़ादी की लड़ाई में एक महत्वपूर्ण हस्तक्षेप था।"

विस्तृत कथानक के लिए पाठकों को उपन्यास की तह में जाना पड़ेगा क्योंकि श्रीप्रकाश मिश्र जी ने हर घटना, हर प्रसंग पर गहरी दृष्टि डाली है और यथार्थ वस्तु-स्थिति को रचा है। तत्कालीन पात्रों के चरित्रों पर उन्होंने खूब चिन्तन किया है, सच्चाई खोलकर रखी है और व्यंग्य करने में संकोच नहीं किया है। यह केवल उनका नैतिक बल ही नहीं दिखाता बल्कि उनके इतिहास-बोध से भी परिचय करवाता है।

यह उपन्यास तत्कालीन जन-चेतना की चर्चा करता है और आंदोलन के प्रति जन-भागीदारी का विस्तार से वर्णन करता है। जगह-जगह पर आपसी गहरे प्रेम प्रसंग के दृश्य भी चित्रित हुए हैं जो लोगों को झकझोरते हैं। देश-भक्ति के लिए प्रेम की कुर्बानी देना उन मतवालों के लिए कठिन नहीं था।

चौरी-चौरा काण्ड की एक-एक घटना को इस उपन्यास में बारीकी और सूझ-बूझ के साथ उन्होंने चित्रित किया है। भाषा का प्रवाह चकित करने वाला है, शैली रोमांचित करती है और सारा विवरण जोश जगाने वाला है। इसमें साहित्य के अलंकार और रसों के दर्शन तो होते ही हैं, साथ ही आंदोलन में शामिल स्त्री-पुरुषों की निर्भयता, तत्परता और आहुति देने का जोश समझने योग्य है। हमारे तत्कालीन इतिहासकारों ने आंदोलन के इतिहास को तोड़ा-मरोड़ा है जिसकी सच्चाई यह उपन्यास सामने लाता है। काण्ड में शामिल पात्रों का चरित्र-विकास उपन्यास की कथा में अलग से शोध का विषय हो सकता है। चरित्र निर्माण के तत्व खूब भरे पड़े हैं और अगली पीढ़ी के सामने उनका उज्ज्वल पक्ष उभरता है। इसमें व्यक्ति का संघर्ष के समय का मनोविज्ञान भी देखा-समझा जा सकता है। यह ऐसा आंदोलन था जिसमें व्यक्ति के साथ-साथ पूरा समाज और पूरा देश शामिल था। यहाँ आंदोलन की अनेक धाराओं को भी समझा जा सकता है। इसके शीर्षक "जो भुला दिये गये" से उपन्यासकार मिश्र जी के मन की पीड़ा और क्षोभ व्यक्त हो रहा है। इस तरह इस वृहद उपन्यास पर अभी यह मेरी छोटी सी समीक्षात्मक टिप्पणी है,अवश्य ही आगे कभी विस्तार से लिखूँगा और तब मेरी आत्मा को चैन मिलेगा।

****

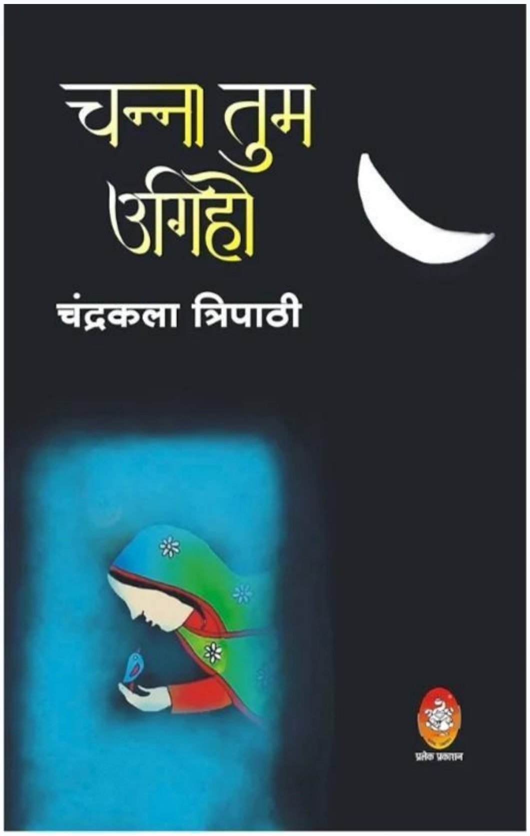

पुस्तक समीक्षा- चन्ना तुम उगिहो (उपन्यास)

लेखक– प्रो. चन्द्रकला त्रिपाठी

प्रकाशक- प्रलेक प्रकाशन

समीक्षक- डॉ.सुवर्णा पाण्डेय , भारत

पीडीएफ, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी

संपर्क- suvarnpandeyvns@gmail.com

चन्ना तुम उगिहो

'चन्ना तुम उगिहो'उपन्यास स्त्री जीवन की जटिलताओं को परत दर परत उद्घाटित करता है। स्त्री अस्मिता के मुहावरे तो बहुत हैं साहित्य में लेकिन उनकी सफलता और चरितार्थता अत्यंत अल्प है। प्रायः स्त्री की सफलता पर मानव समाज मुग्ध तो होता है; परन्तु उसकी इस सफलता को पुरूष समाज खुले मन से स्वीकार करे यह काफी हद तक कम देखने को मिलता है । ऐसा देखा जाता है कि स्त्री की लड़ाई वैसी ही थी जैसे महाभारत में बाहर खडे अर्जुन की लड़ाई , जिन्हें कृष्ण की ज़रूरत थी । उन्हें बताना पड़ा था कि युद्ध क्यों नैतिक है? वह तुम्हारा व्यक्तिगत युद्ध नहीं है , वह नैतिक और मानवीय जीवन मूल्यों के लिए लड़ा जा रहा युद्ध है। लेकिन स्त्री के पास कोई कृष्ण नहीं है, जो उसे इस महासमर में आकर यह बताए कि तुम इन -इन चीज़ों से सामना करो और लड़ो और उसके बाद भी तुम साबूत बचोगी। यह जो महासमर है इसका सघनतम् रूप स्त्री का परिवार और पारिवारिक संबंधों में है, उसके परिवेश में है , जहाँ उसकी निर्मिति होती है, जहाँ उसे राग -अनुराग, समर्पण उसके रक्त में मिल जाते हैं या यूँ कहें कि मिलाया

जाता है। ऐसी भावनाएँ उसे केवल कमजोर ही नहीं करती बल्कि उसे मजबूत भी बनाती हैं । किसी भी व्यक्ति , स्थिति, परिवेश और संघर्ष की हार नहीं होती , हार होती है स्त्री की सबलता और संबंधों की, बल्कि पराजित होने के वो तमाम रूप हैं जिसमें स्त्री संघर्षों को केंद्र में रखकर देखा गया।

यह उपन्यास धीरे-धीरे अपने कलेवर में खुलता हुआ आगे बढ़ता है और सबसे पहले 'रूपा' एक स्वाधीन स्त्री है जो सपने देखती है। उसके सपने वहीं तक जाते हैं जहाँ तक एक आम स्त्री के सपने जाते हैं उसके जीवन में विवाह है। प्रेम है ,उसके जीवन में प्रेम में जीना है और प्रेम में मर जाना भी है। लेकिन वह उसके हिस्से में नहीं होता है ,जब वह नहीं मिलता है तब समझ में नहीं आता है कि अब इस जीवन का वह क्या करे ? फिर इस उपन्यास की नायिका रूपा अपनी सीमा मापती और तय करती है। वो सोचती है "स्व की स्वायत्तता" के विषय में और हमें यह देखना चाहिए कि ऐसी कौन -कौन-सी स्त्रियाँ हैं जिन्हें अपने संघर्षों को जो कि उनके स्वाभिमान और निजता का संघर्ष है , इसलिए उन्हें तय करना पड़ता है, इसका कैसा रूप बनाया जाए। रूपा ससुराल में रहती है और उसे वहाँ सभी स्नेह भी करते हैं लेकिन उसकी निजता का संघर्ष निरंतर चलता रहता है और वो दृढ़ता के साथ निर्णय लेती है कि उसे इस जीवन को मिटा देना है। उसके लिए अत्यधिक श्रम भी करती और करते हुए मर जाना चाहती है।

इस उपन्यास में पहली बार मृत्यु और सुख को एक समान धरातल पर रख कर देखा गया, जहाँ मर जाना सुखद लगता है । फिर उसका पति लौटता है और जिस अश्लील प्रस्ताव के साथ लौटता है । उसके बाद रूपा को लगता है कि अब उसके स्वाभिमान पर चोट आई है और वह चली जाती है।

इसके बाद उत्तर कथा शुरू होती है जिसमें यह दिखाया गया है कि रूपा "अपने स्वत्व और स्वाभिमान" के साथ व्यापक समाज से जुड़ती है। जिससे उसके चरित्र में स्वावलंबन और आत्मनिर्भरता की झलक देखने को मिलती है, और जीवन के यथार्थ संघर्ष से जूझती हुई अपने पैरों पर खड़ी होती है। लेकिन घाव कुछ खुदरा ही था कि फिर एक आत्मीय संबंध आकर उसके ऊपर चोट की तरह गिरता है , तब वह वहाँ से चली जाती है जीवनमूल्यों को समझने, दरअसल रूपा यानी उन तमाम

स्त्रियों के मुक्ति का आकाश है कहाँ? इन महत्वपूर्ण सवालों के आवाजाही से यह उपन्यास किसी निर्दिष्ट प्रचलित अंत की ओर नहीं जाता है। बल्कि खुले आकाश की ओर पहुँचता है। जहाँ बहसों के बहुत सारे बिंदु खड़े हैं जो विमर्शों के बिंदु हैं , स्त्री के लिए सबलता संभव क्यों नहीं है? उसके क्या कारण हैं ? और स्त्री की निर्मिति में समाज कहाँ गलती करता है। हमें देखना पड़ेगा कि जो परिवार स्त्री को सुरक्षा, संरक्षण देता है, वहाँ कैसे स्त्री की सीमाएँ तय होती हैं। किसी समाज की महत्वपूर्ण घटना का जिक्र किया गया हो और उस घटना से उस, समाज के पाठकों का उससे परिचय न हो तब ऐसी स्थिति में पाठक के सामने सबसे पहले अस्वीकार का प्रश्न उठता है। यह 'अस्वीकार' ही 'अविश्वसनीयता' के बोध तक पहुँचता है और ऐसी स्थिति में हो रहे शोषण की स्वाभाविक रूप में उपेक्षा हो जाती है। इसीलिए रचनाकार के लिए 'स्वाभाविकता' का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण होता है। इस संदर्भ में देखें तो यदि रचनाकार इन विविध सामाजिक प्रसंगों से परिचित है, तब ऐसी स्थिति में वह सहजता के साथ स्वाभाविकता की प्रक्रिया से गुजरते हुए अपनी रचनात्मक प्रस्तुति को आगे बढ़ाती है। इस प्रकार उपन्यास की लेखिका विभिन्न सामाजिक घटनाओं और संबंधों के बीच उन दमनकारी व्यवस्थाओं से पूर्ण परिचित हैं, जिनके केंद्र में स्त्री संघर्ष को रखा गया है। उपन्यास में ये सारे सवाल हैं जो अमानवीय ढंग से ध्वनियों, प्रतिध्वनियों के रूप में हैं। बहुत सारी स्मृतियाँ यातनाओं की हैं, जो जगह-जगह पर बोलती हैं। उसके बाद सघन परिदृश्य उभरता है। जो स्त्री के बारे में हमें सोचने के लिए मजबूर करता है और इस उपन्यास में स्त्री प्रश्नों का एक नया आयाम खुलता है जो कि बहुत जमीनी है।

यह उपन्यास लोकमानस से जुड़कर गहरी अर्थ व्यंजनाएँ प्रकट करता है। वस्तुत: इस उपन्यास में उत्तर भारत का किसान परिवेश , जीवन मूल्य , सामाजिक संघर्ष, और सौन्दर्य चेतना का सजीव चित्रांकन देखने को मिलता है। दूसरी तरफ स्त्री विमर्श का जो स्वरूप इस उपन्यास के भीतर में दिखाई देता है उसमें एक ज़िरह के बाद दूसरा ज़िरह चलता रहता है, लेकिन किसी का कोई अंत दिखाई नहीं देता है। इस उपन्यास के भीतर समाज के बदलते स्वरूप और प्रश्नों की विस्तृत श्रृंखला दिखाई देती है। उसके साथ ही समाज की विभिन्न चुनौतियों को स्वीकार करते हुए यह उपन्यास आगे बढ़ता है। इसमें एक शहर है जो

शहर और गाँव की आवाजाही से बना हुआ है। इस उपन्यास में समाज की बुनियादी विशेषताएँ जो प्रकृति और मानवीय जीवन, लोक स्मृतियों से और लोक भाषा से जुड़ी हुई हैं , इसके भीतर लोक मुहावरे भी दिखाई देते हैं। इन सब का सुंदरतम रूप ही चन्ना तुम उगिहो उपन्यास है। इसके भीतर एक स्त्री के अंतिम संघर्ष को बहुत करीब से जैविक प्रभाव में देखा गया है।

इस उपन्यास की भाषाई बुनावट इसका एक रोचक पक्ष है, खासकर इसके लोकराग से निकली हुई भाषा का बेहद ही कुशल ढंग से काव्यात्मक प्रयोग किया गया है जैसे- 1-सीता जैसी स्त्री को कोने की बिलार बना दिया।

2- चूल्हे की आंच की लहर जाकर रूपा की सूखी आँखों में मिल गई।

चन्ना तुम उगिहो उपन्यास स्त्री जीवन को केंद्र में रखकर लिखा गया है जिसमें बहसें, विमर्श, वैचारिकता आदि के प्रति कोई अतिरिक्त आग्रह दिखाई नहीं देता बल्कि उपन्यास ही परत दर परत समस्त संघर्षों और संबंधों को खोलती हुई आगे बढ़ती है, यह उपन्यास अपने भीतर निहित तत्वों को पाठकों से स्वमेव ही कहती है कि यह स्त्री जीवन का महाकाव्य है।

मुख्य बिंदु -

1- भीतरी संताप का मौखिक संघर्ष ।

2-स्त्री संघर्ष की गाथा ।

3-शहर और गाँव की आवाजाही से निर्मित उपन्यास ।

4-अस्वीकारता और अविश्वसनीयता का प्रश्न।

5- सीमाओं का उल्लंघन और मर्यादा का सवाल ।

6-इस उपन्यास के भीतर समाज के बदलते स्वरूप और प्रश्नों की विस्तृत शृंखला दिखाई देती है।

******

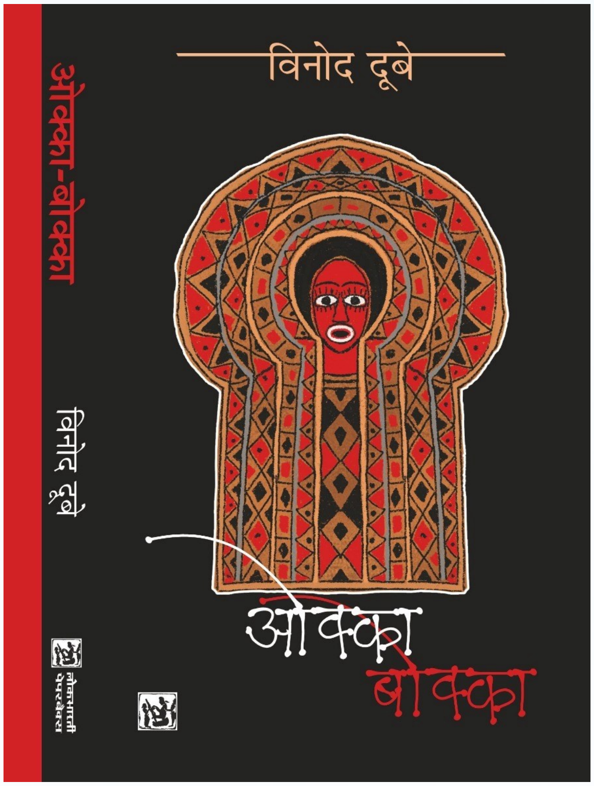

पुस्तक समीक्षा- ओक्का बोक्का (उपन्यास)

लेखक– विनोद दूबे, सिंगापुर, प्रवासी साहित्यकार

प्रकाशक- लोकभारती प्रकाशन (राजकमल प्रकाशन समूह)

समीक्षक- अरुण सुंदरम (साहित्य प्रेमी और मर्चेंट नेवी के पूर्व-कप्तान)

संपर्क- maradnusnura@gmail.com

एक आम आदमी के पूरे जीवन का वृत्त खींचता, सही गलत से परे, उसके जीवन के हर पड़ाव पर किये गए चुनावों की कहानी है "ओक्का -बोक्का"

आईये शुरूआत कथाकार विनोद और इनके इस उपन्यास के कथानक से करते हैं।

कथाकार विनोद दूबे का यह दूसरा उपन्यास है, जो उनके पहले उपन्यास इन्डियापा की सफलता के तकरीबन चार वर्षों के पश्चात् आया। किसी रचना पर लेखक के व्यक्तित्व का असर होना लाज़मी है इसलिए विनोद जी का एक संक्षिप्त परिचय मुनासिब रहेगा। विनोद ४३ वर्ष पहले उत्तर प्रदेश के भदोही ज़िले के एक गाँव में जन्में थे। हिंदी माध्यम में बारहवीं तक पढ़ने के पश्चात गुलीवर की तरह समुंदरी यात्राएँ और जोखिम उठाने की लालसा इन्हें मर्चेंट नेवी की ओर आकर्षित कर गई। मुंबई में ३ साल समुद्र-पूर्व शिक्षा पाने के बाद तरह-तरह के जलपोतों पर इन्होने पहले कैडेट बनकर व्यावहारिक प्रशिक्षण पाया। फिर आने वाले वर्षों ने धीरे-धीरे इन्हें जहाजी अफसर की सीढ़ी चढते हुए

कप्तान बनते देखा। जहाज़ों के खानाबदोशी वाले आलम ने उन्हें जीवन के विभिन्न चुनौतीपूर्ण पहलुओं से एक छोटी उम्र में ही परिचित करवा दिया। इसलिए इनकी लेखनी में अनेक रसों का जायका और अनुभूति दे पाने की प्रतिभा संमिश्रित है।

जहाँ इनकी पहली कृति इन्डियापा बनारस की सर्पिल गलियों और घाटों से हमें घुमाती दो युवा प्रेमियों की प्रेम और विरहगाथा से अवगत कराती, उनकी भावनाओं, विवशताओं और खट्टे मीठे अनुभवों के बवंडर से गुजरती, एक अद्भुत और मनोरंजक Roller-Coaster ride पर ले गयी थी, वहीं ओक्का बोक्का एक कसे हुए कथानक में हमें बचपन की दोस्तियों, पढ़ाई की आपाधापी, नौकरी की कशमकश, वैवाहिक जीवन के दांव पेच – अर्थात हमारे संपूर्ण मानव जीवन – बचपन से वृद्धावस्था तक - की तक़रीबन सारी प्रसन्नताओं, चुनौतियों, आपाधापियों और मारामारी से मनोरंजन सहित अवगत कराता है।

१९६५-१९७५ का दशक इस भाग को पढ़ मन की आँखों के समक्ष जीवंत हो उठता है। दोस्तों द्वारा पहले दिन पहले शो में स्कूल गोल कर शोले फ़िल्म देखने की कथा अट्टहासिक और गुदुदाहक है। बच्चों के साधारण खेल - जिनके लिए किसी विशेष यन्त्र की आवश्यकता नहीं होती। हममें से जो पैतालीस - पचास की उम्र के इर्द गिर्द मंडरा रहे हैं, इन खेलों से ज़रूर वाकिफ़ होंगे। इनके बारे में हृदय में टीस और लम्बी साँस लेकर अवश्य हम उन दिनों की अनभूली यादों में खो जायेंगे।

चलिए, अब इस उपन्यास में प्रयुक्त भाषा / शैली की बात करते हैं।

विनोद अपनी कहानी बहुत सरल और तरल अन्दाज़ से सुनाते हैं। इनकी भाषा आम बोलचाल की है, जिसमें उत्तर के साथ मध्य प्रदेश की हिंदी तो है ही एवं साथ में जबलपुरिया स्लैंग्स और शब्द भी अपनी मिठास लिए फुदकते दिखते हैं। बचपन में अपने पिता के साथ सैर करने और स्वादिष्ट रबड़ी खाने का इतना चाव भरा वर्णन किया है कि मैं एक अंश (कहानी का, रबड़ी का नहीं) आपके साथ बाँटना चाहूँगा।

"जिस दिन पिताजी की दुकान बंद रहती, एकाध बार वे मुझे लेकर अपनी रैले साईकिल पर शाम को सदर अपने मित्रों से मिलने जाया करते थे। बचपन में साईकिल में सामने के फ्रेम बार पर बैठ नज़ारों को देखते हुए जाने का अपना ही एक सुख था। बारिश के दिनों में पिताजी एक बड़ा सा गहरे हरे रंग का मिलिट्री रेनकोट पहन कर

निकलते और उनके इस विशालकाय रेनकोट में फ्रेम बार पर बैठा मैं आराम से ढँक जाता था। आनंद से बीच का एक बटन खोल कर मैं अपनी आँखें और मुँह बाहर निकाल बरसात का भरपूर आनंद लेता।"

"पिताजी मुझे एक प्रसिद्ध हलवाई की दुकान ले जाते और एक प्लेट रबड़ी आर्डर करते। खास मेरे लिए। वाह उस रबड़ी के बारे में आज भी सोचूँ तो पालतू कुत्ते के समान मेरे मुँह से लार टपकने लगती है। बर्फ की तरह सफ़ेद दूध में तैरती हुई लज़ीज़ मलाई की मोटी-मोटी चतुर्भुजाकार परतें, खुशबूदार इलायची, केसर और पिस्ता के साथ उस कुल्हड़ में इठलाते हुए खाने का निमंत्रण देते थे, जिसे देखकर बड़े-बड़े उपवास करने वालों की नीयत बदल जाये। पहला चम्मच मुँह में जाकर एक मीठी संतुष्टि का सिर्फ एहसास जगाता था, क्योंकि उस के बाद दूसरा और तीसरा चम्मच अंदर पहुँच बस दुविधा ही पैदा करते। ऐसा लगता कि यह कटोरी काश एक अक्षय पात्र में बदल जाये। मैं एक के बाद एक चम्मच बिना हिचक के बस चटकारे लेते हुए खाता चला जाऊँ। पर ऐसा कभी न होता। वह कटोरी कब ख़त्म हो जाती मालूम ही नहीं पड़ता। मेरे निराश से चेहरे के भाव तो पिताजी शीघ्र ताड़ लेते और एक और कटोरी का आर्डर देते। इस दूसरी कटोरी को खाने में मैं जितनी देर हो सके उतनी लगाता। पर खाने और न खाने के असमंजस में ही फिर यह दूसरी कटोरी भी बिलकुल साफ़ हो जाती। सालों बाद मैंने कितनी बार इस हलवाई की दुकान की तलाश की है, लेकिन यादों के धुंधले नक्शों में उस दुकान की सही खोज़ मृगतृष्णा की तरह ही मुझे यहाँ-वहाँ भटकने के लिए बाध्य करती रही है। जबलपुर से निकलने के बाद कितनी ही बार कितने ही शहरों में रबड़ी खाई होगी मैंने। परन्तु बचपन के उस स्वाद की आज तक कोई बराबरी नहीं कर पाया। शायद ये यादें सिर्फ परेशानियाँ देने के लिए ही दिमाग में कुलबुलाती रहती हैं। दिमागी असंतोष को ही और उद्वेलित करने के लिए द्वंद्व करती रहती हैं। "

अगर आपके मुँह में भी पावलोव के प्रसिद्ध प्रयोग की तरह पानी आ गया हो, तो आप समझ गए होंगे, विनोद की मंझी हुई लेखनी और भाषा के प्रभाव को।

आईये आप इस उपन्यास के पात्रों की चर्चा करते हैं।

यह कहानी तीन मित्र शरद, अनवर और सुलभ के बारे में है. तीनों बचपन के मित्र हैं। उपन्यास शरद की जबानी लिखा गया है। जबलपुर में इनके बचपन, स्कूल में पढ़ने, वयस्कावस्था प्रविष्टि के दिन बखूबी वर्णित किये गए हैं। बचपन में हमारी दुनियादारी की समझ सबसे कम होती है और शायद इसी कारण बचपन के दोस्त जीवन भर दोस्त से ही लगते हैं। क्योंकि जिस उम्र में वे मिलते हैं उस समय हम सब के पास मासूमियत की पोटली के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। बचपन की दोस्ती का रिश्ता धीमीं आंच पर पका ऐसा सम्बन्ध है, जिसका स्वाद तमाम उम्र हमारे साथ रहता है।

तीनों मित्रों के परिवार अलग तबके के हैं। एक लोअर मिडिल क्लास का है, दूसरा अपने मर्चेंट नेवी में कार्यरत पिता के और एक बिन माँ का अनाथ होने के कारण अपनी बूढ़ी नानी के संरक्षण में पल रहा है। तीसरा एक व्यावसायिक परिवार से है। तीनों की अपनी कमजोरियाँ और खूबियाँ है और विविधताओं के बावजूद इनकी मित्रता बहुत गाढ़े रंग की है। हमारा नायक शरद जहाँ बुद्धिमान और मेहनती है, वहीं स्वभाव से थोड़ा डरपोक, भावुक और हीन भावना से ग्रस्त भी है। सुलभ वाक्पटु, जुगाड़ू और हँसमिजाजी होने का ऊपरी प्रभाव तो सब पर छोड़ता है, परन्तु उसकी हँसी के पीछे थोड़ी मायूसी भी है जो उसने बहुत अन्दर कहीं छुपा रखी है। अनवर इस तिकड़ी की रीढ़ की हड्डी है। किसी कूटनीतिज्ञ सी समझ और बड़े बूढ़े सी मानसिक परिपक्वता है इनमें। खरी बात बोलने और बिगड़े काम सुलझाने की सलाहें देने का काम अनवर के अलावा कोई नहीं कर सकता। लेखक अपने पात्रों से बहुत घुले मिले हैं और उनकी नस-नस से वाकिफ हैं। उनके कथानक की गाड़ी आपको इन तीन मुख्य पात्रों के बचपन, किशोरावस्था, जवानी की राह से इतने सुचारू रूप से शब्दों की पिचकारी से भिगोते और उल्लासित करते ऐसी यात्रा करवाएगी कि आप परोक्ष रूप से अपने आप को उनका नजदीकी सहयात्री बनता पायेंगे। विनोद की रचनाओं में स्त्रियों का विशेष दर्ज़ा रहा है और ओक्का - बोक्का भी इस तथ्य से अछूता नहीं रहा। इन दोस्तों के साथ होड़/ तकरार/ बहस/ प्रेम करती और अपनी विशेष भूमिकायें निभाती हुई कुशल एवं निपुण नारियाँ - पूर्णिमा, मंजरी, रुखसार और वैदेही भी हैं जो आपके हृदय को विविध भावनाओं से उद्वेलित करती हुईं बहुत कुछ सोचने पर विवश करेंगी. इनके निजी, कार्यसम्बन्धी और

पारिवारिक जीवनों के संघर्षों, आपाधापी और जद्दोजहद की घटनाएँ आपके दिल और मस्तिष्क पर गहन छाप देर तक के लिए छोड़ जायेगी।

इस उपन्यास का काल समय १९६० से २०२० के बीच का प्रतीत होता है। यह उपन्यास इन तीन दोस्तों के बचपन से लेकर जवानी और अधेड़ावस्था तक के सफर की आनंदमय, संघर्षमय और चुनौतीपूर्ण झलकियाँ हमें बारी बारी से दर्शाता हुआ आगे बढाते हुए लेता चलता है। अत: इस लगभग ५० - ६० साल के काल को मनोरंजक अन्दाज़ से विकसित किया गया है। अधिकतम कथा प्रवाह शरद की जबानी है इसलिए उसके जीवन के पड़ावों को प्रमुखता दी गयी है। पर ऐसा भी नहीं कि बाकी दोनों दोस्त अपने हिस्से की कथा में भाग नहीं लेते। विनोद की भरपूर कोशिश रही है कि उन्हें भी पर्याप्त स्थानों में अपने जीवन गाथा का अनावरण करने के लिए उचित रंगमंच मिले। तीनों मित्रों की कहानियों का समिश्रण एक संतुलित भोजन - स्वादिष्ट वेजीटेरियन पुलाव, बूंदी राएते और खीर की तरह पाठकों को सभी स्वादों से अवगत कराते हुए प्रारम्भ से अंत तक इन सभी की गतिविधियों में पूरी तरह तल्लीन रखते हुए पन्ने एक के बाद एक पलटवाते हुए कैसे अंत तक ले जाता है कि इन पचासेक वर्षों का सफ़र मानों कुछ मनोरंजक घंटों में ऐसा गुम हो जाता है कि मालूम ही नहीं चलता। उपन्यास के आखिरी पन्ने पर एक क्षुब्धता सी महसूस होती है कि मैंने यह उपन्यास क्यों इतनी जल्दी पढ लिया? शायद और धीरे-धीरे चटकारे लेकर पढ सकता था, पूरा जायका लेने के लिए!

जैसे मदारी खेल दिखाते हुए आखिर में अपना चूरन भी बेच देता है ठीक वैसे ही यह उपन्यास मनोरंजन के साथ साथ मन पर एक गहरा प्रभाव भी छोड़ता है। " मिडलाइफ क्राइसिस " से जूझ रहे कईयों को यह अपनी ही कहानी लगेगी। जीवन के ओक्का -बोक्का खेल में जो चयन हमने किये हैं उनका प्रभाव दिख भी रहा होगा। शायद यह उपन्यास आपको अपने चयन पर फिर से सोचने के लिए बाध्य करेगा।

भारत में यह उपन्यास अमेज़न पर उपलब्ध है और सिंगापुर में आप लेखक से सीधे संपर्क करके इसे प्राप्त कर सकते हैं। अगर आपने अभी तक इसे नहीं पढा है तो आज ही शुरू कीजिए।

****

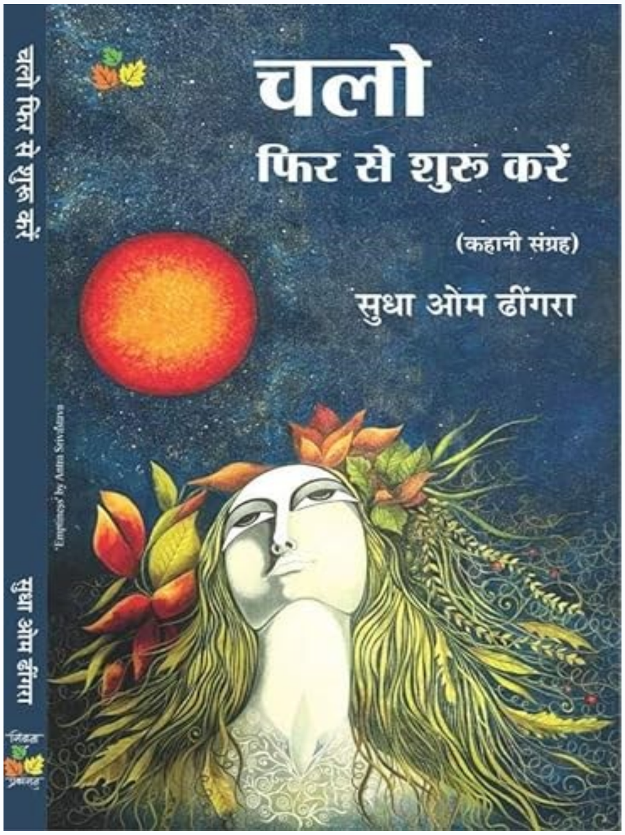

पुस्तक समीक्षा- चलो फिर से शुरू करें (कहानी संग्रह)

लेखक– सुधा ओम ढींगरा, अमरीका, , प्रतिष्ठित प्रवासी साहित्यकार

प्रकाशक- शिवना प्रकाशन

समीक्षक- रेखा भाटिया , अमरीका

संपर्क- rekhabhatia@hotmail.com

'चलो फिर से शुरु करें - सामाजिक सरोकारों से प्रेरित कहानियाँ

हिन्दी की जानी-मानी वरिष्ठ लेखक सुधा ओम ढींगरा का शिवना प्रकाशन से प्रकाशित नया कहानी संग्रह " चलो फिर से शुरू करें " मैंने पढ़ा । क़िताब हाथ में आते ही उसका सुंदर कवर ध्यान खींचता है। एक सुंदर स्त्री मानें या स्त्री रूप में सृष्टि जिसकी आँखों में एक अजीब सी कशिश है और एक कसक भी, रहस्यमयी भाव हैं, कुछ स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट और वह आसमान में दूर ताक रही है ,एक गहन शांति के साथ कवर रोमांचित करता है।

पहली कहानी "कभी देर नहीं होती " की शुरूआत रोचक है और पहले पल ही पाठक समझ जाता है कहानी विदेशी पृष्ठभूमि पर शुरू हुई है। मुख्य पात्र आनंद यानी नंदी के मन के अंतर्द्वंद्व के साथ शुरू होती है ,जो अपने गंतव्य को खोजता रास्ते के सही दिशा भान से अपने गंतव्य तक पहुँचना चाहता है। नंदी आज आनंद से नंदी बनने की

ख़्वाहिश में यादों और सोचों के मंज़र में भटक रहा है, शुरूआत रोचक होने के साथ ही कहानी में सार्थक संदेश समाहित है। एक औरत घर को स्वर्ग बनाती है और एक औरत ही घर को नर्क बना सकती है। ज़माना कितना भी आधुनिक हो जाए लेकिन जब तक स्त्री और पुरुष के बीच शादी नामक संस्था कायम है , परिवार की बागडोर स्त्री और पुरुष दोनों के हाथों में होती है। आमतौर पर स्त्रियाँ अधिक विवेकशील, सहनशील होती हैं और परिवार को बाँधकर रखने के लिए औरत सारे समझौते करती है। यह कहानी नंदी की माँ और उसके लालची परिवार के लोभ, चालाकी और षड्यंत्र का भंडाफोड़ करती है। विषम परिस्थितियों के बावजूद कोमल हृदय के स्वामी नंदी के पिता सारे समझौते कर बच्चों को उचित संस्कार देते हैं जो उन्हें उनके माता-पिता से विरासत में मिले हैं। नंदी उन्हीं संस्कारों को आगे बढ़ाता है ," जिस वृक्ष की जड़ें मज़बूत होती हैं, उसका तना कभी नहीं सूखता, खूब मज़बूत रहता है। " यह भावुक कहानी गहरा प्रभाव छोड़ती आगे बढ़ती है।

"वे अजनबी और गाड़ी का सफ़र " इस कहानी का विषय बड़ा संवेदनशील और ज्वलंत है। अच्छाई और बुराई दोनों से दुनिया का कोई भी देश, कोई भी समाज अछूता नहीं है। वेश्यावृत्ति के लिए मानव तस्करी और ड्रग्स के लिए तस्करी के विभिन्न हथकंडे आपराधिक तत्व हमेशा से अपनाते रहते हैं। ड्रग्स के कथानक पर शुरू से लेकर अंत तक बहुत नाटकीय अंदाज़ में कहानी को बहुत रोचक तरीके से लेखक ने लिखा है। कहानी के दो पात्र पत्रकारिता जगत से हैं और मूलतः भारत से हैं। उनके नज़रिये से, बातचीत से, उनकी जागरूकता से और यात्रा से पूरी कहानी में भारत के रेलवे स्टेशन से लेकर अमेरिका के रेलवे स्टेशन की तुलना, दो संस्कृतियों की समझ, मानव तस्करी, एक अच्छे नागरिक के कर्तव्य, ऑफ़िसरों का पूर्ण मुस्तैदी से अपराधियों को पकड़ना और अंत में कहानी को उसके लक्ष्य तक पहुँचाना बहुत सजीव बन पड़ा है। कहानी पाठक को गहरा बाँधकर रखने में पूर्ण सक्षम है। पात्रों और परिस्थितियों को बहुत सुघड़ता से गढ़ा गया है।

शुरू से झुंडों में रहते आए मानवों की सभ्यता के विकास के साथ ही समाज ने जन्म लिया। समाज यानी मानवों का समूह जिसमें रहकर मानव कुछ नियमों का पालन करेंगे ,जिससे अराजकता पर अंकुश लग सके

और इंसानों और जानवरों की जीवन शैली और मानसिकता में अंतर हो ! सभ्य मानव सभ्यता में फिर धर्म ने जन्म लिया। एक सुगठित, संस्कारी, धार्मिक समाज की उत्पत्ति के साथ ही इंसान और जानवर दो अलग-अलग प्राणी हो गए। इंसानों का बौद्धिक स्तर अन्य प्राणियों की तुलना में उच्च स्तर का होता है, इंसान अधिक संवेदनशील और सभ्य होते हैं। लेकिन आए दिन धार्मिक स्थलों पर यौन उत्पीड़न के समाचार आते रहते हैं। "उदास बेनूर आँखें " इस कहानी की प्रस्तुति बहुत मौलिक है। अमेरिका की पृष्ठभूमि पर सामाजिक सरोकारों को उजागर करती कहानी का कथानक दिल को छू लेता है, एक ऐसे अछूते कोने से लेखक ने कहानी को लिखा है, जिस पर समाज में आज भी पर्दा डाला जाता है। साथ ही एच.आई.वी. की बीमारी के प्रति एक नए दृष्टिकोण की ओर सचेत करता है। यहाँ एक बात ज़रूर गौर करनी चाहिए सुधा ओम ढींगरा की सभी रचनाओं में चाहे वह कहानी हो या उपन्यास पूरा शोध करने के बाद ही वे ठोस तत्थों को समाहित करती हैं।

"इस पार से उस पार " एक बहुत सरल और आत्मिक कहानी है ,जिसका विषय असाधारण है। जीवन में ऐसा कई बार अनुभव होता है जब कोई अनुभूति होने लगती है और बाद में सचमुच में वैसा ही होता है। कई बार भीतर से हो रहा इन्टूशन नज़रअंदाज़ हो जाता है लेकिन बाद में घटित होने के बाद ध्यान जाता है। कई बातें संसार में ऐसी ही हैं जिनका वैज्ञानिक स्पष्टीकरण नहीं होता लेकिन वह संसार में विघमान हैं। इस कहानी को बहुत निपुणता से लेखक ने निभाया है।

"चलो फिर से शुरू करें " कहानी की शुरूआत में सागर, लहरें, रेत और हवा के साथ मुख्य पात्रों के मन के संवेगों का चित्रण बहुत सुंदर है। बेटे की गृहस्थी की उलझनों से उपजी हुई एक दम्पति के मन की उहापोह, दर्द, पीड़ा का बखूबी वर्णन है। इस कहानी में दो संस्कृतियों और सभ्यताओं का भेद वर्णित करने में लेखक बहुत सफ़ल रही हैं। सुधा ओम ढींगरा के लेखन की यह खासियत रही है वे नॉस्टेल्जिया के वेग में बहे बिना दो धरातलों के फ़र्क को बख़ूबी अपने लेखन से तराश एक मूर्त रूप देती हैं। उनके लेखन में हमेशा एक संतुलन रहता है। गंभीर और ज्वलंत विषयों पर भी निष्पक्ष लिखना उनके लेखन की सार्थकता है।

लेखक ने इस संकलन में भाषा सरल और सहज रखी है

लेकिन कहानियों में सामाजिक सरोकारों के विषयों को प्राथमिकता दी गई है ,जिससे वह पाठकों के दिल में सहज स्थान बनाने में सफ़ल रही हैं।

"चलो फिर से शुरू करें " कहानी का शीर्षक ही क़िताब का शीर्षक है, इस कहानी की विशेषता ही यह है वह एक आशा देती है, एक सुखद सन्देश देती है," समस्याएँ कितनी भी बड़ी हों हर उम्र में जीवन जीना फिर से शुरू किया जा सकता है।" एक तरफ एक माँ रंगभेद और नस्लभेद की उसकी संकीर्ण मानसिकता के कारण बेटी को उसकी गृहस्थी तोड़, बच्चों को छोड़कर परिवार से नफरत करने और धोखा देने पर उकसाती है, विवश करती है। दूसरी ओर एक भारतीय दम्पति अपनी अमेरिकन बहू को खुले दिल से अपनाते हैं। सारे समझौते करते हैं और बेटे का सम्बल बनते हैं। कई बार छोटे-छोटे कारणों के पीछे मंशा कितनी भयानक होती है, जिन्हें हम साधारण समझ नज़रअंदाज़ करते जाते हैं, यह कहानी इस तथ्य का बहुत सुंदर उदाहरण है।

"वह ज़िन्दा है...",सच और झूठ, सही और ग़लत का द्वंद्व उसके भीतर चलता है, शायद वह उस द्वंद्व से निजात पा जाए अगर .... ", "जो मज़बूत इरादे के होते हैं वह सच स्वयं सुनना चाहते हैं , उसकी बहस, उसके तर्क बस यही हैं, वह सच बोलने के ख़िलाफ़ नहीं पर सच बोला कैसे जाए !" यह कहानी निःशब्द कर गई। शायद ही एक औरत, एक आदमी, एक इंसान ऐसा होगा जो इस कहानी को पढ़ कर रोया न हो ? मन का एक कोना पिघला देती है यह कहानी......

एक जन्में या अजन्में बच्चे के पैदा होने के पहले ही भ्रूण के गर्भ में आते ही एक स्त्री माँ बन जाती है, हर जीव प्राणी मादा एक माँ बन जाती है और यह सृष्टि का परम सत्य है। एक माँ के लिए उसके बच्चे की मृत्यु घोर भीषण त्रासदी है। उस दुःख से उभरना एक माँ के लिए असंभव होता है। संसार भूल जाए, एक माँ हमेशा अपने बच्चे को याद कर रोती है। अस्पतालों में मरीज़ों को सच कैसे परोसा जाता है और कैसे परोसना चाहिए एक गंभीर नैतिक प्रश्न उठाती है यह कहानी।

आज के युग में ख़बरें हवा, ध्वनि, प्रकाश, बिजली से भी तेज़ रफ़्तार से सोशल मीडिया से चारों ओर फ़ैल जाती हैं। लेकिन सोशल मीडिया का एक अँधेरा पहलू भी है। यह खबरें कितनी सच्ची होती हैं या झूठी होती हैं, इसकी पड़ताल कोई भी नहीं करता। सोशल मीडिया पर आए

दिनों कई चेतावनियाँ आ जाती हैं, यह कितनी तर्कविहीन हैं या तर्क संगत उसकी जाँच किए बिना, बिना सोचे समझे अक्सर ज़्यादातर उसे विभिन्न ग्रूपों में फॉरवर्ड कर देते हैं। यह कितनी ग़लतफ़हमियाँ पैदा कर सकता है और जिसके परिणाम कितने भयंकर हो सकते हैं ! यह वर्तमान युग की एक समस्या भी बन चुका है। इसी समस्या पर एक करारा प्रहार करती है कहानी "भूल -भुलैया " ! एक बात यह भी सच भी है, अमेरिका में एक वक्त ऐसा भी आया था जब एशियन्स पर बहुत हमले हो रहे थे, उस वक्त प्रशासन अपना काम कर रहा था, पुलिस अपना कार्य कर रही थी लेकिन सोशल मीडिया पर ऐसी सच्ची-झूठी चेतावनियों ने जंगल की आग में तेज़ हवा का, आग में घी का काम किया था, तब एशियन्स कहीं भी जाने में असुरक्षित महसूस करते थे। कहानी अवश्य पठनीय है।

"कंटीली झाड़ी" एक बहुत अर्थपूर्ण और संदेशवाहक कहानी है। किसी के भीतर ईर्ष्या और झूठे अहम् की तुष्टि के लिए कहानी की एक पात्र अनुभा का चरित्र एक कंटीली झाड़ी के समान हो जाता है, जिसके पास से गुज़र जाने के बाद दूसरे का मन ज़ख्मी हो जाता है और इज़्ज़त तार-तार क्योंकि एक कंटीली झाड़ी दंश मारने का उसका स्वभाव कभी नहीं छोड़ती चाहे उसे उपवन के सबसे सुंदर गमले में रोप दो। नेहा की समझदारी से वह उस दंश से बच तो गई लेकिन हमारे आसपास के वातावरण में ऐसे कई इंसान मौजूद रहते हैं जिनसे अत्यंत सावधानी रखने की ज़रूरत होती है। कहानी का एक-एक पात्र बहुत निखर कर सामने आया है, कई भागों में कहानी कभी वर्तमान में कभी अतीत में जाती है लेकिन एक सूत्र में पिरोई गई यह कहानी कहीं भी खंडित नहीं होती और इसका रोचक और चौंकाने वाला प्रवाह बना रहता है। जटिल कथानक को लेखन सुगमता से एक धारा प्रवाह में बहाने में अत्यंत सफ़ल रही हैं। यह लेखक के लेखन का कमाल है, एक गूढ़ बात को सरलता और सहजता से अपनी कहानियों में कह जाना सुधा ओम ढींगरा की विशेष योग्यता है।

सन् 2001 के सितंबर माह में न्यूयॉर्क के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हुए आतंकवादी हवाई हमलों में जिनमें हज़ारों लोगों की जानें चली गई थीं। जिसके दुष्प्रभाव से अमेरिका में जीवन, अर्थ व्यवस्था कई सालों तक अस्त -व्यस्त रही। कई वर्षों तक हवाई यात्राओं में असुरक्षा

की स्थिति बनी रही, इसका असर आज भी दिखाई देता है। उस त्रासदी की किरचें आज भी लोगों के मन में भय और पीड़ा उत्पन्न करती हैं। "अबूझ पहेली " एक बहुत मार्मिक कहानी है। मुक्ता धीर की भीतरी अनुभूति से उसे भविष्य में घटित होने वाली त्रासदी के दृश्य त्रासदी से पहले से दिखाई देने लगते हैं और उसे आभास हो जाता है कुछ अनहोनी घटित होने वाली है। वह उस अनहोनी के होने के अंदेशे में पीड़ा और भय से गुज़रती है लेकिन समझती है वह विषाद में जा रही है। जीवन के ऐसे कई क्षण होते हैं जब बैठे-बैठे मन अचानक उदास होने लगता है या कहीं कोई अंदेशे के होने का भाव उत्पन्न हो जाता है। यह एक सामान्य प्रक्रिया है जिसे धरती पर बहुत से जीव प्राणी अनुभव करते हैं। विज्ञान में इसका बहुत विस्तार से स्पष्टीकरण नहीं है लेकिन मानव मनोविज्ञान इसे मानता है। यह कहानी मानव मन की कई अबूझ पहेलियों को सुलझाने में मददगार है। कहानी का विषय अनूठा है और लेखन शैली बहुत अनूठी है, यह एक अनुभव है, पाठक स्वयं भी वह सब महसूस करता है, जिसे लेखक ने लिखते समय महसूस किया होगा !

"कल हम कहाँ तुम कहाँ " दोस्ती और एकतरफ़ा प्रेम की अनूठी कहानी है जिसका अंत बहुत सुखद बन पड़ा है। यह कहानी गुदगुदाती है-

"उम्र का एक दौर ऐसा होता है जब आदर्शवाद पूरे जीवन पर हावी होता है और व्यावहारिकता का कोई ज्ञान नहीं होता .... "

"उसे मना भी लेता तो जीते जी मार देता "

"प्यार के भी भिन्न-भिन्न रंग और पुष्प होते हैं।" कहानी में प्रेम की एक अनूठी परिभाषा दी गई है, इसे समझौता कहें, समर्पण या गहरा सच्चा प्रेम ! यह बहुत उम्दा रचना है लेखक की।

कहानी संग्रह "चलो फिर से शुरू करें" वर्तमान हिन्दी साहित्य में एक ठंडे, खुशबूदार, प्राणवायु से भरे मींठे हवा के झोंके के समान है जिसे पढकर पाठकों को तपती धरा पर राहत महसूस होगी। यह कहानी संग्रह आम जीवन के यथार्थ, कटु, खट्टे-मीठे अनुभवों पर आधारित सामाजिक सरोकारों से प्रेरित एक सामाजिक कहानी संग्रह है जैसे कहानियों के पात्र और घटनाएँ जीवन के आसपास में ही विचरण कर रहे हों। कई कहानियाँ में सामाजिक सरोकारों से संबंधित ज्वलंत विषयों पर लेखक ने चुपचाप से बिना तामझाम के गहरे

स्वर उठाए हैं और जागरूकता फ़ैलाई है। कहानियाँ गहरा प्रभाव छोड़ती हैं, भाषा, शिल्प बहुत प्रभावी है और प्रत्येक कहानी का कथानक शुरू से अंत तक बहुत प्रभावशाली है । लेखक का लेखन गरिमामय और गौरवशाली है, सटीक और सहज है । कहानियाँ कसी हुई हैं , कोई दोहराव नहीं है और अपने उद्देश्य को पाने में सफ़ल हैं। ऐसा लगता है मानों आसपास ही घटी घटनाओं और पात्रों से प्रेरित होकर लेखक ने जीवन की अमूल्य झलकियों की झाँकी प्रस्तुत की हो। कहानियाँ पाठकों के हृदय पर गहरी छाप छोड़ती हैं। "वह ज़िन्दा है " कहानी ने एक माँ के हृदय की चीख-पुकार को बहुत उम्दा तरीके से चित्रित किया है, वहीं कहानी "कंटीली झाड़ी " एक औरत के विक्षिप्त ,विकृत रूप को चित्रित करने में बेहद सफ़ल रही है। यह एक पठनीय रोचक, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक कहानी संग्रह है जो भारी शब्दों में ज्ञान बाचने की बजाए मनोरंजक और संदेशवाहक के रूप में असर करता है।

****

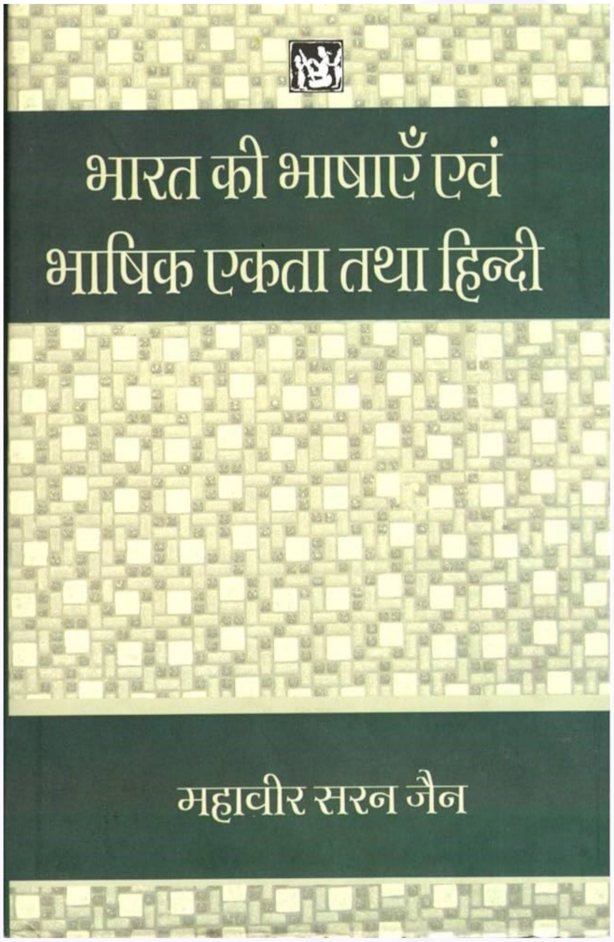

पुस्तक समीक्षा- भारत की भाषाएँ एवं भाषिक एकता तथा हिन्दी

लेखक– प्रोफ़ेसर महावीर सरन जैन, सेवा निवृत्त निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान

प्रकाशक- लोकभारती प्रकाशन

समीक्षक- प्रोफ़ेसर जी ॰ गोपीनाथन

संपर्क- mahavirsaranjain@gmail.com

भारत की भाषाएँ एवं भाषिक एकता तथा हिन्दी

भारत की भाषाएँ एवं भाषिक एकता तथा हिन्दी भारत में एक ओर सांस्कृतिक वैविध्य है तो दूसरी ओर सांस्कृतिक एकता भी है। "भारत की भाषाएँ एवं भाषिक एकता तथा हिन्दी" ग्रंथ में एक ओर भारत में बोली जाने वाली चार भाषा परिवारों की 116 भाषाओं की विवेचना प्रस्तुत है तो दूसरी ओर भारत की भाषिक एकता की अवधारणा के सूत्रों को खोजने का स्तुत्य प्रयत्न है तथा इसी ग्रंथ में हिन्दी के वैश्विक महत्व को प्रामाणिक आँकड़ों के साथ रेखांकित किया गया है। इस ग्रंथ में भारतीय भाषाविज्ञान की बहुत सी भ्रांतियों को दूर करने की पहल की गई है तथा मौलिक, प्रामाणिक एवं अकाट्य मान्यताएँ एवं स्थापनाएँ प्रस्थापित हैं। लेखक द्वारा प्रस्थापित मान्यताओं एवं स्थापनाओं में से निम्न अधिक उल्लेखनीय हैं – (1)इसके पहले देश एवं विदेश के भाषाविदों की यह मान्यता रही है कि भारत के

उत्तर में आर्य परिवार की तथा भारत के दक्षिण में द्रविड़ परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। प्रोफेसर जैन ने इस मान्यता का खण्डन किया है। (2)भारत में प्रत्येक काल एवं युग में कोई न कोई सम्पर्क भाषा रही है। इस कारण तथा भारत के विभिन्न भागों में सांस्कृतिक आदान प्रदान होते रहने के कारण भारत के विभिन्न भाषा परिवारों की भाषाओं में भी परस्पर भाषिक तत्त्वों का आदान-प्रदान होता रहा है।(3)भारतीय भाषाओं के अभी तक जो अध्ययन सम्पन्न हुए हैं, वे लिखित सामग्री के आधार पर हुए हैं। लिखित सामग्री के आधार पर वर्तमान में बोली जानेवाली भाषाओं के सम्बंध में निष्कर्ष निकालना अवैज्ञानिक एवं अतार्किक है।(4)आज भारत में जितनी भाषिक विविधताएँ मिलती हैं उनकी अपेक्षा विगत युगों में ये विविधताएँ एवं भिन्नताएँ और अधिक रही होंगी।(5)भारतीय भाषाओं के अध्ययन के लिए नए प्रतिमानों एवं नई दृष्टि की आवश्यकता है। भारत में बोली जानेवाली भिन्न भाषा परिवारों की भाषाओं के समान क्रोड के वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अध्ययन की आवश्यकता असंदिग्ध है।(6) किसी भी विषय का भेद दृष्टि से अध्ययन करने पर हमें अन्तर, असमानताएँ एवं भिन्नताएँ अधिक दिखाई देती हैं उसी विषय का अभेद दृष्टि से अध्ययन करने पर हमें एकता एवं समानताएँ अधिक नज़र आती हैं। विद्वानों ने भारत की भाषाओं के भेदों की जाँच-पड़ताल तो बहुत की है; बाल की खाल बहुत निकाली है किन्तु इस ग्रंथ में विद्वानों के विचार के लिए यह विचार-सूत्र मंडित है जिससे प्रेरित होकर वे भारतीय भाषाओं में विघमान सादृश्य के सूत्रों की खोज के काम में प्रवृत्त हों सकें और जिसके परिणाम स्वरूप भारत की भाषिक एकता की अवधारणा और अधिक स्पष्ट एवं उजागर हो सके। ग्रंथ के दूसरे खण्ड में हिन्दी की अन्तर्क्षेत्रीय, अन्तर्देशीय एवं अन्तरराष्ट्रीय भूमिकाओं की मीमांसा की गई है। प्रस्तुत ग्रंथ, भारतीय भाषाओं की भाषिक एकता एवं हिन्दी भाषा से सम्बंधित समस्त पक्षों एवं आयामों पर, एक साधक की शोध निष्ठा और वैचारिक चेतना का अप्रतिम मानदंड है।

*****

Bharat Ki Bhashayen Evam Bhashik Ekta Tatha Hindi
https://amzn.eu/d/6thBwnf

Bharat Ki Bhashayen Evam Bhashik Ekta Tatha Hindi
https://amzn.eu/d/6thBwnf

Bharat Ki Bhashayen Evam Bhashik Ekta Tatha Hindi
https://amzn.eu/d/6thBwnf

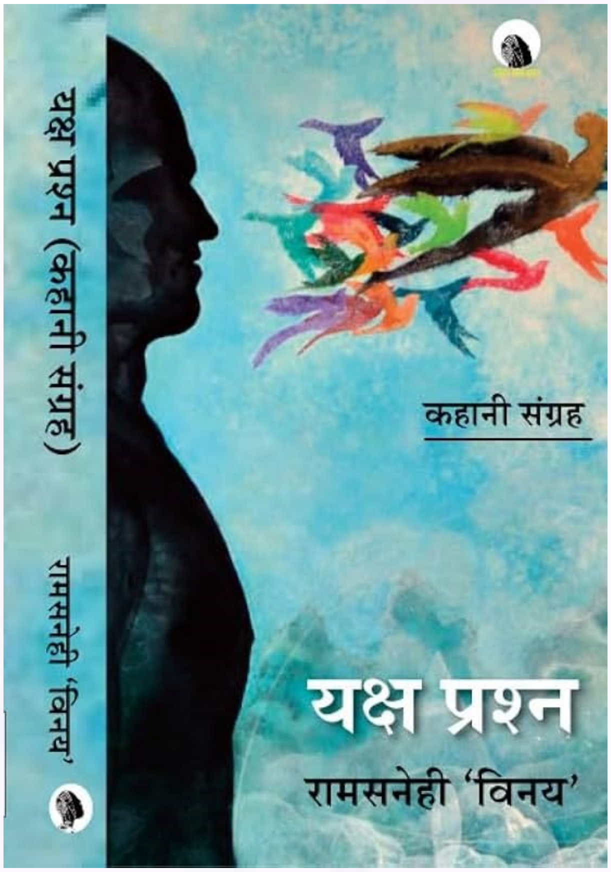

पुस्तक समीक्षा- यक्ष प्रश्न (कहानी संग्रह)

लेखक– राम सनेही 'विनय'

प्रकाशक- रश्मि प्रकाशन, लखनऊ

समीक्षक- वसीम अहमद नगरामी , भारत

संपर्क- vasimahmad438@gmail.com

दबे-कुचलों का प्रतिनिधित्व करती कहानियाँ –यक्ष प्रश्न

उपन्यास, एकांकी संग्रह,हाइकू संग्रह, नाटक एवं ग़ज़ल संग्रह समेत साहित्य की अनेक विधाओं में वृहद लेखन में तल्लीन राम सनेही 'विनय' जी का एक और ताज़ा तरीन कहानी संग्रह रश्मि प्रकाशन लखनऊ से प्रकाशित होकर आया है। इसमें लेखक ने समाज के दबे -कुचले एवं वंचित-शोषितों के दर्द व दंश को उकेरती कहानियों का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। यक्ष प्रश्न शीर्षक कहानी संग्रह रामसनेही 'विनय' की कलम का एक शाहकार है, जिसमें

विषयों की भिन्नता लिए तेरह कहानियाँ सम्मिलित हैं। मंज़रे आम पर आया यह उनका दूसरा कहानी संग्रह है। जिसकी पहली कहानी यक्ष प्रश्न है जिसमें ईंट भट्टा मजदूरों के शोषण व उनके मान-मर्दन का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया गया है। बानगी के तौर पर कहानी का यह अंश "बोल सोनपरी बोल न।" किसन ने उसकी आँखों में आँखें डाले हुए निरीहता से पूछा, तो सोना की पलकें अनायास झपक गईं और उन घनी पलकों वाली कजरारी आँखों से दो बूंद अनायास टपक पड़ीं,"वो वो मिसरा।" इसके आगे वह कुछ न बोल पाई। उसका गला भरभरा गया और वह किशन की हथेलियों में मुँह डाल कर फफक कर बिलखने लगी। "मिसरा? वो विजय? भट्टा मालिक का भाई? उसने फिर छेड़ा क्या तुझे..वो साला..मैं अभी जाता हूँ साले का खून न पी लिया तो मेरा नाम..." "नहीं -नहीं तुम अभी मत जाओ..वे कई हैं, मुनीम के पास मजमा लगाए बैठे हैं। सब पिए हुए हैं।" इसके बाद जो कुछ होता है वह इंसानियत को शर्मशार करने वाली वह सच्चाई है जो भट्टा मजदूरों की नियति बन कर रह गई है। दूसरी कहानी आचार्य जी में द्रोणाचार्य व एकलव्य की कथा को नए शब्दों में गढ़ा गया है। संग्रह की तीसरी कहानी जिन्स उस दौर की कहानी है जब आधी आबादी सिर्फ भोग्या भर मानी जाती थी और बहुत कम उम्र में रजवाड़े इन्हें खरीद कर अपनी हवेलियों की ज़ीनत बना लिया करते थे। संग्रह में सम्मिलित एक और कहानी दाई माँ में भी लेखक ने समाज में पीढ़ियों के बीच आ गई रूढ़ियों को तोड़ने की ज़रूरत पर बल दिया है। जबकि संग्रह की मेहमान कहानी का यह अंश अपने आप में बहुत कुछ बयान कर जाता है - "मैं ताना नहीं दे रहा विमला - मैं तुमको आगाह कर रहा हूँ कि कल को वही लोग कहेंगे कि जिन रिश्तेदारों के डर से हमने शहर छोड़ दिया था, फिर उन्हीं की ज़रूरत पड़ गई? अब बिना रिश्तेदारों के काम नहीं चल रहा है? तुमको याद है न, जब हम लोगों ने शहर छोड़ा था तो तकरीबन हर रिश्तेदार ने हम लोगों से मिन्नतें की थीं कि भइया यह शहर न छोड़ो.. हम सब लोगों को बड़ा सहारा है तुम लोगों से, कोई नाते - रिश्तेदार शहर में नहीं है। गौ माता कहानी के ज़रिए लेखक ने छुट्टा जानवरों की समस्या को उठाने की कोशिश की है। कहानी में गाय को माता कहकर महिमा मंडित किए जाने का वास्तविकता की धरातल पर

विचार करने की बात कही गई है। मधुयामिनी शीर्षक कहानी में दो पियक्कड़ मित्रों की अंतरंगता का सविस्तार चित्रण किया गया है, जिनकी दिनचर्या का अन्त हर दिन शराब के नशे में धुत होकर गिरते -पड़ते, लड़ते -झगड़ते घर पहुँचने से होता था। संग्रह की कहानी पुत्र रत्न में समाज में पुत्र व पुत्री के बीच किए जाने वाले भेदभाव को मुखरित किया गया है। प्रधान जी कहानी में लेखक ने सामंतवादी दौर का बेहद स्वाभाविक चित्रण करने की कोशिश की है बानगी के तौर पर कहानी का यह अंश काबिले गौर है --'हाँ-हाँ..तो इसमें इतना घबराने की क्या बात है? गया है तो जाने दो। दरोगा कोई आदमखोर हव्वा है, जो हमको देखते ही कच्चा चबा जाएगा? उस बार देखा नहीं था रिपोर्ट लिखने का मज़ा...क्या मिला था दलितों को?" प्रधान जी ने बीती घटना की तरफ संकेत किया था। मगर नारायन पंडित की बदहवासी बरकरार थी, वह उसी तरह काँपते हुए बोले, "सो बात तो ठीक है पर अब तो वो तिवारी जी दरोगा हैं नहीं,उनकी जगह सुना है कोई नया आया है।" "नया हो या पुराना। दूसरा हो चाहे तीसरा...प्रधान जी ने आजिज़ी से कहा,"दरोगा बदल जाने से यहाँ हमारी सेहत में कोई असर पड़ने वाला नहीं।" "नहीं! नहीं प्रधान जी! कहते हैं नया दरोगा बहुत सख़्त ख़तरनाक है और जाति का दलित है।" संग्रह की सातवीं कहानी किरायेदार है। इस कहानी संग्रह की सबसे सशक्त व तर्क की कसौटी पर खरी उतरने वाली पठनीय कहानी बन पड़ी है। पाठक को यह अन्त तक जोड़े रखने में सक्षम है। खासकर इस कहानी का यह अंश "अरे हमारा धर्म भ्रष्ट हो जाएगा न.." "कैसे?" विनोद ने कहा। "कैसे का क्या मतलब?" "मेरा कहने का मतलब है कि अगर इस तरह आप का धर्म भ्रष्ट हो जाएगा, तो उसका भौतिक परिणाम क्या होगा? मसलन कोई शारीरिक -आर्थिक नुकसान हो जाएगा क्या? आपका कैसा नुकसान होगा?" "शारीरिक -आर्थिक नुकसान तो नहीं होता..पर हाँ, कोई न कोई नुकसान ज़रूर होता होगा।" "पर श्रीराम ने शबरी के बेर खाए थे, उनका तो कोई नुकसान नहीं हुआ था।" "अरे! वे भगवान थे, उनका क्या नुकसान होगा..पर हम तो आदमी हैं.." "आदमी का ही क्या नुकसान हुआ आज तक धर्म भ्रष्ट होने से? किसी ने आपको बताया नहीं क्या? क्या किसी की

जान चली गई या किसी का हाथ कट गया, पैर कट गया, कोई नुकसान हो गया, कोई मर गया, विकृत हो गया? आखिर कौन सा विकार आ गया -किसी शूद्र या दलित के छू लेने से, उसके साथ उठने, बैठने,खाने -पींने से किसी का किस तरह का नुक़सान हुआ? कहीं आपने पढ़ा या देखा -सुना कुछ या नहीं?" गोस्वामी ने पूछा। "ऐसा तो नहीं देखा -सुना" -मानिक तिवारी ने जवाब दिया। और अंततः तर्क की कसौटी पर हार कर मालिक मकान को अपना मकान किराए पर देना ही पड़ा। संग्रह में सम्मिलित गौमाता कहानी मुंशी प्रेमचंद की पूस की रात की याद दिला जाती है। संग्रह में सम्मिलित अन्य कहानियों में मृत्युदण्ड के विरुद्ध,सोने का पिंजरा एवं पोस्टल आर्डर जैसी कहानियाँ ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश में व्याप्त भ्रष्टाचार को न सिर्फ उजागर करती हैं, वरन यह पाठकों के लिए भी यक्ष प्रश्न छोड़ जाती हैं। यह भी अनदेखा नहीं किया जा सकता कि संग्रह में सम्मिलित एक -दो कहानियों को छोड़कर अधिकांश कहानियाँ ज़रूरत से अधिक विस्तार का शिकार लगती हैं। लेखक को लेखन में ऐसे विस्तारवाद से बचना चाहिए। ताकि कहानी पढ़ते समय पाठक को यह अहसास न हो कि कहानी को लंबी करने के लिए जबरन शब्दों को ठूसा गया है।

******

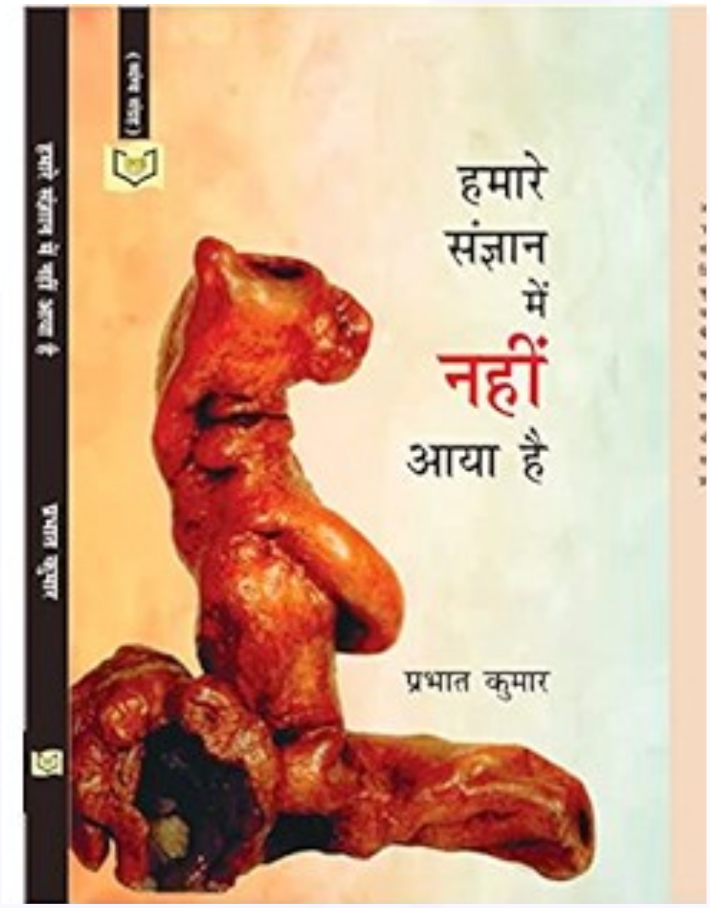

पुस्तक समीक्षा- हमारे संज्ञान में नहीं आया है (व्यंग्य - संग्रह)

लेखक– प्रभात कुमार

प्रकाशक- इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा

समीक्षक- विजय विशाल , भारत

संपर्क- vjyvishal@gmail.com

कब्र के पत्थरों पर व्यंग्य अंकित नहीं होता

चार्ल्स लैंब ने कहा था, 'कब्र के पत्थरों पर व्यंग्य अंकित नहीं होता।' बात सही है, जो गुजर गया उस पर हम व्यंग्य नहीं करते और जो अभी उपस्थित ही नहीं है, वह हमारे व्यंग्य का विषय नहीं होता। हम व्यंग्य करते हैं उस पर जो हमारे सामने है, और जिसे हम और हमारा समाज पसंद नहीं करता। व्यंग्य समसामयिक जीवन की अनचाही स्थितियों से जन्म लेता है। हम जो चाहते हैं, उसकी संगति में जब हमारा यथार्थ नहीं होता तब हमारे भीतर असंतोष उपजता है, आक्रोश जन्म लेता है। उसी से व्यंग्य की अभिव्यक्ति होती है। यह व्यंग्य की अभिव्यक्ति उस सबके विरोध में होती है जिससे हमारी सामाजिक उन्नति अवरुद्ध हो रही होती है। संक्षेप में यूँ कह सकते हैं कि पुरानी परंपराओं को तोड़कर स्वच्छ, सुंदर, सुदृढ़, पारदर्शी

शोषणविहीन समाज के निर्माण के लिए एक सच्चा व्यंग्यकार सदैव प्रयत्नशील रहता है।

हालाँकि हिंदी साहित्य में व्यंग्य की परंपरा नई नहीं है। यह हमें सात सौ साल पहले कबीरदास के साहित्य में भी मिलती है। कबीरदास ने मध्यकाल की सामाजिक विसंगतियों यथा जाति भेद, अंधश्रद्धा, हिन्दू-मुस्लिम धर्मों में व्याप्त आडम्बरों, अंधविश्वासों, सामंती व्यवस्था, वर्ण-व्यवस्था के दुर्गुणों, रूढ़ियों आदि कुरीतियों पर व्यंग्य किये हैं।

किसी भी व्यंग्यकार पर समसामयिक घटनाओं का प्रभाव सर्वाधिक होता है। जीवन के संघर्ष उसके दृष्टिकोण को दिशा निर्देशित करते हैं। वे उसे वर्ग-विभक्त समाज में दूसरों का हक छीनकर सांसारिक सफलता प्राप्त करने की अमानवीयता और टुच्चेपन को समझाते हैं। जिसके चलते एक व्यंग्यकार अमानुषिक यथास्थितिवादी एवं विकास विरोधी रूढ़ियों पर प्रहार करने में सक्षम होता है। व्यंग्य वह औजार है जो जीवन के झाड़-झंखाड़ को काट फेंकता है। ऐसी परम्परा जो जीवन को शक्ति देने के बजाय बीमार बना देती हो, जो समाज में व्याप्त अन्याय, अनाचार, मिथ्याचार, पाखंड व दोमुंहेपन को बढ़ाती हो, उन परम्पराओं पर व्यंग्य की चोट पड़ती है। कह सकते हैं कि व्यंग्य मूलतः समाज हित में होता है। यदि व्यंग्य चेतना को झकझोर देता है, विद्रूप को सामने खड़ा कर देता है, आत्मसाक्षात्कार कराता है, सोचने को बाध्य करता है, व्यवस्था की सड़ांध को इंगित करता है और परिवर्तन की ओर प्रेरित करता है तो वह सफल व्यंग्य है।

इस दृष्टि से प्रभात कुमार का नवीनतम व्यंग्य-संग्रह 'हमारे संज्ञान में नहीं आया है' के तमाम व्यंग्य इस पैमाने पर खरे उतरते हैं। इस पुस्तक की प्रस्तावना में ख्यातिप्राप्त कार्टूनिस्ट व कॉलमिस्ट राजेन्द्र धोड़पकर ने व्यंग्य लेखन को वर्तमान समय के लिए एक ज़रूरी विधा के रूप में परिभाषित किया है। इस कड़ी में वे कहते हैं कि अगर किसी व्यक्ति को व्यंग्य लिखने की प्रेरणा अंदर से मिल रही है तो इसका मतलब यह है कि वह समाज में व्याप्त विसंगतियों से बेचैनी महसूस कर रहा है और उनसे जूझने का जज़्बा उसमें है। व्यंग्य दरअसल कमज़ोर का हथियार है जो उसे अपने से ताकतवर अन्यायी पर हँसने और निर्भय होने की ताक़त देता है। इसलिए जिस समाज में अन्याय और दमन ज़्यादा होता है वहाँ व्यंग्य भी ज़्यादा होता है। राजेन्द्र धोड़पकर के अनुसार तानाशाह सबसे ज़्यादा अपना

मजाक उड़ाये जाने से चिढ़ते हैं क्योंकि इससे उनकी ताक़त का खोखलापन जाहिर होता है। अभी हमारे समाज में असहिष्णुता, अन्याय, गैर-बराबरी जिस तरह बढ़ी है या बढ़ रही है उसमें व्यंग्यकार का काम और भी ज़्यादा गम्भीर हो गया है।

यहाँ यह बात भी रेखांकित करने योग्य है कि इस व्यंग्य-संग्रह के लेखक प्रभात कुमार बैंक प्रबंधक के रूप में सेवारत रहे हैं जहाँ जीवन का गुणा-भाग वित्तीय लेन-देन से तय होता है। ऐसे में कह सकते हैं कि सृजनात्मक लेखन उनकी नौकरी का हिस्सा न था। मगर अपनी कलात्मक अभिरुचियों के चलते सृजनात्मक कला की अनेक विधाओं में इनका सफल हस्तक्षेप रहा है। चूँकि अनेकबार व्यंग्य लेखन का एक सम्बंध तात्कालिक घटनाओं से भी रहता है, जिनके तुरंत प्रकाशन से व्यंग्य की प्रासंगिककता ज़्यादा बढ़ जाती है। इसलिए व्यंग्यकार प्रकाशन की चुनौती से भी जूझता रहता है। अपनी धारदार मारक व्यंग्यशक्ति की बदौलत प्रभात कुमार इस चुनौती को पार करने में सफल रहे हैं। देश की विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं से लेकर दैनिक समाचार-पत्रों में इनके लिखे व्यंग्य निरन्तर प्रकाशित होते रहते हैं। इस संग्रह से पूर्व भी इनका एक व्यंग्यसंग्रह 'ऐसा देस है मेरा' शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है।

हालाँकि हास्य और व्यंग्य लेखन परस्पर जुड़ा लेखन है। एक-दूसरे से गुंथे होने के बावजूद भी इनको उपयोगिता के आधार पर अलग-अलग परिभाषित किया जा सकता है। अधिकतर हास्य रचनाओं का उद्देश्य मात्र मनोरंजन तक सीमित रहता है, मगर व्यंग्य हास्य का पुट लिए हुए भी किसी न किसी विसंगति पर प्रहार करता नज़र आता है।

ऐसे समय में जब अधिकतर स्वनामधन्य हास्य लेखक पति-पत्नी के गरिमामय सम्बन्धों की बखिया उघाड़ते हुए अपने हल्के लेखन को हास्य-व्यंग्य लेखन का दर्जा देने की जद्दोजहद में मशगूल हों और जिसे समाज के एक बड़े पाठकवर्ग का समर्थन मिलता दिख रहा हो, समाज में व्याप्त विसंगतियों पर कटु प्रहार करते हुए व्यंग्य लिखना किसी चुनौती से कम नहीं है। इस संग्रह में संग्रहित प्रभात कुमार के व्यंग्यों को पढ़ते हुए पाठक का मन सामाजिक व व्यवस्थागत विसंगतियों के प्रति विक्षोभ से भर उठता है। इस तरह पाठक के मन में बेचैनी पैदा होना, यथास्थिति से इतर उसका विचलित हो उठना या

विसंगतियों के प्रति विक्षोभित हो जाना, व्यंग्यकार की लेखनी की सफलता का घोतक है। स्थितियों को जानने-समझने में, उनको भीतर तक खंगालने में तथा उनके मन्तव्यों को बूझने में व्यंग्यकार प्रभात कुमार के पास अपनी तीक्ष्ण दृष्टि तो है ही, साथ ही है उन समझी-बूझी स्थितियों को अपनी व्यंग्यात्मक मारक शैली में पाठकों तक कलात्मक ढंग से परोसने की कला। अधिकतर व्यंग्य रचनाओं की विषयवस्तु से यह भी स्पष्ट होता है कि प्रभात कुमार के ये व्यंग्य सामाजिक परिवर्तन के लिए एक अस्त्र कि तरह काम करते प्रतीत होते हैं। ये कुरीतियों के खिलाफ खड़े होकर उन्हें बेनकाब ही नहीं करते बल्कि बुराई और अच्छाई के बीच रेखा भी खींचते हैं। मतलब प्रभात कुमार मानते हैं कि व्यंग्य का सीधा सम्बन्ध समाज से होता है, विशेषकर उस समाज से जिसमें विसंगतियाँ अधिक होती हैं। इसलिए वे मानते हैं कि व्यंग्य का सामाजिक परिवर्तन से भी सीधा सम्बन्ध है तथा कोई भी सुधार अप्रत्यक्ष रूप से परिवर्तन में अपनी भूमिका निभाता है। वैसे इस परिवर्तन के लिए व्यंग्यकार की दृष्टि प्रगतिशील होनी चाहिए। बिना प्रगतिशील दृष्टि वाले व्यंग्यकार से सामाजिक परिवर्तन की आशा रखना हास्यास्पद होगा। कह सकते हैं कि जिस प्रकार टीके के प्रयोग द्वारा हम अनेक रोगों के प्रकोप से बचे रहते हैं, उसी प्रकार व्यंग्य अपने आरोपों से सामाजिक दोषों के निराकरण के लिए दवा का काम करता है।

इतिहास साक्षी है कि व्यंग्य ने समाज के ऐसे व्यक्तियों ठीक करने में कोई कसर नहीं छोड़ी जिनके सम्बन्ध में जनसाधारण को कुछ कह पाना संभव नहीं था। शेक्सपियर ने अपने नाटक 'दि मर्चेंट ऑफ वेनिस' द्वारा सूदखोरों का हुलिया बिगाड़ दिया था तो फ्रांस के मोलियर ने अपने 'पैकिमरफरिए' नामक चरित्र से तत्वज्ञानियों की खिल्ली उड़वाकर अरस्तु से मतभेद व्यक्त करने वालों को फांसी के तख्तों पर से उतार लिया था। व्यंग्य की शक्ति प्रकट करने वाले इससे बड़े उदाहरण और क्या हो सकते हैं ?

इस संग्रह में कुल बावन व्यंग्य संग्रहित हैं। मैं समझता हूँ कि उन सभी पर टिप्पणी करना पाठक की अभिरुचि या उनके कुतूहल को कम करने के समान है। संग्रहित सभी व्यंग्य कमोवेश अपने-अपने मन्तव्यों को समेटे उम्दा व्यंग्य हैं जो चुटीली भाषायी अंदाज में पाठक को कुलबुलाने में सक्षम हैं। जहाँ तक व्यंग्यों की विषयवस्तु का सवाल है ये जीवन के समसामयिक सभी पहलुओं को समेटते नज़र

आते हैं, अर्थात व्यंग्यकार की नज़र एकपक्षीय न होकर बहुआयामी है जो जीवन की व्यापकता को समग्रता में देखती है। पुस्तक के प्राक्थन में स्थापित व्यंग्यकार अशोक गौतम ने सही कहा है कि इनके व्यंग्य सरल-सहज भाषा में पाठकों के बीच अपना स्थान तो बनाते ही हैं, साथ ही साथ इनके व्यंग्यों में उठाई समस्याएँ नितांत हमारे आसपास कि होती हैं जिनमें बहुधा हम चलते-फिरते कहीं-न-कहीं जाने अनजाने में दो चार होते रहते हैं। 'अनूठी राष्ट्रीय प्रतिभाएँ', 'अच्छे दिन हैं ना', 'अमीरी का जलवा', 'इतिहास बदलने का इच्छुक', कानून क्या करे', 'नेता और अफ़सरशाही' 'नेता जी का हार्दिक स्वागत', 'पाखंड के कैनवास', 'सरकार का पारदर्शी बयान', 'हम विदेशियों से आगे हैं', या फिर 'हमारे संज्ञान में नहीं आया है' जैसे अनेक व्यंग्य जीवन के हर क्षेत्र कि विडम्बनाओं के प्रति एक गहरी उधेड़बुन लेकर लिखे गये हैं। विडम्बनाएँ तरह-तरह के अन्तर्विरोधों, विद्रूपों और विषमताओं के रूप में व्यक्त हुई हैं।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि प्रभात कुमार ने अपने चुटीले अंदाज में न केवल सरकारी तन्त्र और उसकी लचर कार्यशैली पर तीखे प्रहार किये हैं, बल्कि राजनितिक, धार्मिक, सामाजिक, यहाँ तक कि पारिवारिक रिश्तों की खामियों को भी उसी अंदाज में अपने निशाने पर रखा है। निश्चय ही यह व्यंग्य-संग्रह हिंदी साहित्य व हिमाचली लेखन के लिए एक बड़ी उपलब्धि है।

****

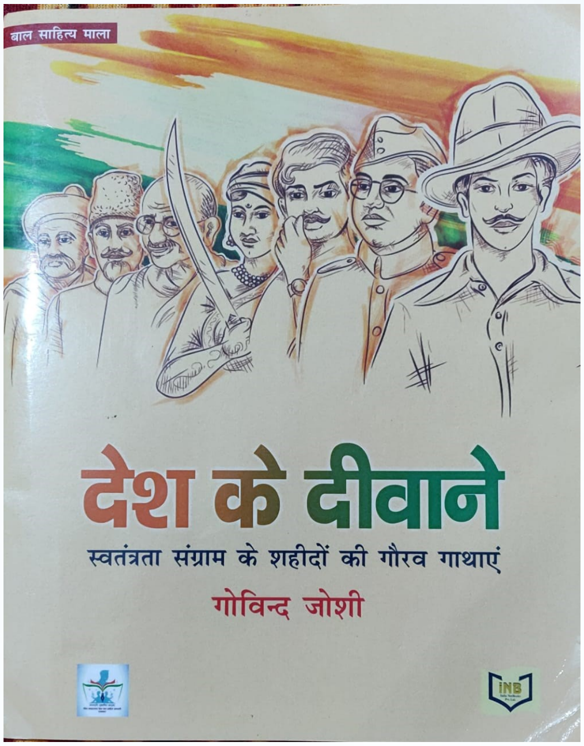

पुस्तक समीक्षा- "देश के दीवाने" (स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों की गौरव गाथाएँ)

लेखक– गोविन्द जोशी

प्रकाशक- इंडिया नेटबुक्स प्रा. लि.(नोएडा)

समीक्षक- सुनील गज्जाणी , भारत

संपर्क- sgajjani@gmail.com

"देश के दीवाने" (स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों की गौरव गाथाएँ)

"देश के दीवाने"(स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों की गौरव गाथाएँ) गोविन्द जोशी द्वारा रचित ऐसी अनुपम कृति जिसका शीर्षक देख ही आकलन किया जा सकता है कि यह कृति देश के उन अमर सपूतों को समर्पित है जिनके समर्पण-त्याग-यातनाएँ - बलिदान वश हम आज आज़ादी का अमृत महोत्सव का महा उत्सव मना पा रहें हैं! उन अमर सपूतों को " देश के दीवाने" कृति द्वारा स्मरण भी किया गया है तो उन सपूतों को भी "देश के दीवाने" माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है जिंहे या इतिहास में स्थान ही प्राप्त ही नहीं हुआ अथवा राष्ट्र अनभिज्ञ रहा है उन देश के दीवानों से!

"देश के दीवानों" में कुल जमा उन्नीस अमर सपूतों की नन्हा शहीद टेगरा, कुँवर प्रताप सिंह बारहठ, सुनीति घोष (चौधरी), प. रामप्रसाद बिस्मिल,शहीद करतार सिंह सराबा,यतीन्द्रनाथ दास, किशोर छात्रों का बलिदान, कनकलता बरूआ, सरदार भगत सिंह, चोफेकर त्रिमूर्ति दामोदर-बालकृष्ण-वासुदेव चोफेकर, प. चंद्रशेखर आज़ाद, खुदीराम बोस, शहीद छंगा, वीरांगना अजीजन बाई, चिक्कवेंकटप्प नायक, नेताजी सुभाषचंद्र बोस एवं महाराणा प्रताप की जीवन गाथाओं को बहुत ही मनोयोग एवं शोध परक कार्य कर संकलन के रूप एक उल्लेखनीय कृति प्रस्तुत की गई है!

देश के दीवानों ने कितनी असहनीय मानसिक-शारीरिक यातनाएँ भोगते हुए उफ्फ्फ तक नहीं की, यह हम उन अमर सपूतों की जीवन गाथाओं को जितनी सहजता से अध्ययन करते हुए किंचित कल्पना मात्र से सिहर उठते हैं उन्हें गोविन्द जोशी ने उन्हीं भावों के साथ लिपिबद्ध कर उन गाथाओं को अपनी कलम से मानो साक्षात-सा कर दिया!

"देश के दीवाने" में अधिकाशत: उन अमर सपूतों को संकलित किया है जिन्हें हम भले ही अनगिनत बार कहीं ना कहीं चाहे पाठ्यक्रम में अथवा अन्य ऐतिहासिक प्रसंगों में पठन कर चुके हैं, करते रहते हैं परन्तु जितनी बार अध्ययन हो हर बार उनका पठन करना कम ही लगता है परन्तु लेखक गोविन्द जोशी ने अपने दृष्टिकोण से, अपने स्तुत्य श्रम द्वारा बहुत ही मनोयोग से उनकी गाथाओं को उकेरा है जिसकी एक नन्ही-सी बानगी स्वतंत्रता संग्राम की शेरनी -सुनीति घोष (चौधरी) के सन्दर्भ में प्रस्तुत करना चाहूँगा जिनसे स्वयं लेखक जोशी ने वर्ष -1977 में पत्र व्यवहार किया जिसके प्रत्युत्तर को उल्लेखित करते हुए जोशी लिखते हैं - क्रांति की देवी, बंगाल की शेरनी सुनीति घोष ने बड़े दर्द भरे शब्दों में मुझे यह उत्तर लिखा था -"मुझे यह लिखते हुए बहुत दुख होता है कि देश के क्रान्तिकारी आंदोलन पर बहुत कम लिखा गया है! देश की आज़ादी में सशस्त्र क्रांतिकारी आंदोलन के क्रान्तिकारियों ने जो महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, उसे नकारा गया है! उसकी उपेक्षा की गई है! मैं समझती हूँ कि तुम इस काम को पूरा करोगे! मेरा आशीर्वाद और शुभकामनायें तुम्हारे साथ है! " इस प्रकार से समझा जा सकता है कि जोशी ने इन हुतात्माओं की जीवनी की कहीं से मात्र नकल नहीं की बल्कि सही तथ्यात्मक रूप से प्रस्तुत किया!

"देश के दीवाने" में 19 अमर सपूतों को संकलित किया है परन्तु इनमें से अनुक्रमणिका के क्रमानुसार निम्न क्रम के (1) - आज़ादी का नन्हा शहीद -टेगरा (6) - क्रांति के साकार अवतार - शहीद करतार सिंह सरबा (12) - शहीद चाफेकर त्रिमूर्ति दामोदर- बालकृष्ण - वासुदेव चाफेकर (14)- वह अनाम बलिदानी बालक - शहीद छंगा (15) क्रांति की बेटी -अजीजन बाई (16) मुझे फांसी न दो तोप के गोले से उड़ा दो!(मैसूर) कर्नाटक का बलिदानी युवक राजा - चिक्कवेंकेटप्प नायक

आज़ादी के आंदोलन के वो नायक रहे हैं जिन्हें या तो बिसरा दिया गया अथवा उन्हें इतिहास में स्वर्णिम मान तो क्या नाम ही नहीं मिला जिन्हें लेखक गोविन्द जोशी ने इस संकलन में स्थान प्रदान कर उन हुतात्माओं से परिचय कराया!

*****

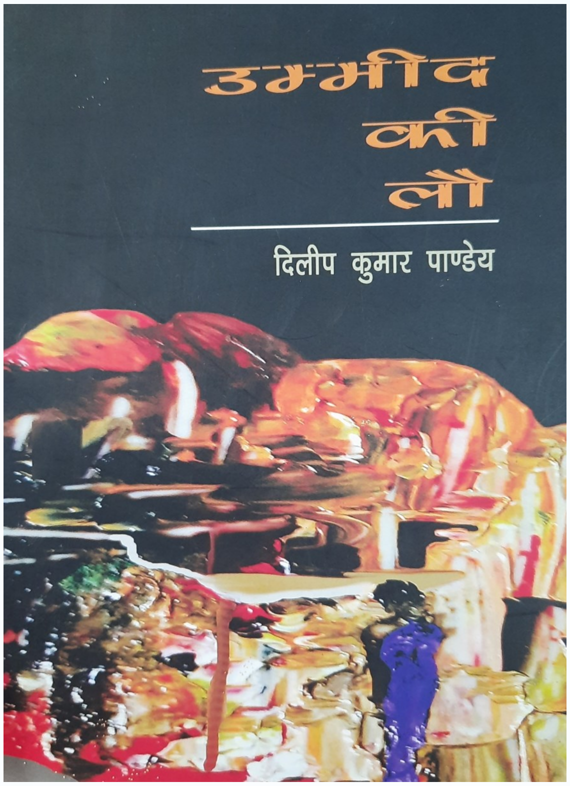

पुस्तक समीक्षा- उम्मीद की लौ (काव्य- संग्रह)

लेखक– दिलीप कुमार पांडेय

प्रकाशक- -प्रतिबिंब प्रकाशन ,फगवाड़ा ,पंजाब

समीक्षक- डॉ०विजयानन्द , भारत, राष्ट्रीय अध्यक्ष - वैश्विक हिंदी महासभा

संपर्क- 33vijayanand@gmail.com

' उम्मीद की लौ ' एक उत्कृष्ट काव्यकृति

युवा रचनाकार श्रीयुत दिलीप कुमार पांडेय की कुल 67 कविताओं का यह संग्रह " उम्मीद की लौ " बिंब-प्रतिबिंब प्रकाशन ,फगवाड़ा ,पंजाब से प्रकाशित हुआ है । इस संग्रह में कवि ने अपने जीवन के संघर्ष सामाजिक विद्रूपताओं, जीवनयापन के लिए भागमभाग और समय की चक्की में पिस रहे मनुष्य की जिजीविषा को केंद्रित कर नई कविताओं का सृजन किया है। कवि ने निरपेक्ष भाव से अपनी मातृभूमि के परिपेक्ष्य को काव्य पंक्तियों में समाहित करते हुए फगवाड़ा, पंजाब तक के जीविकोपार्जन के लिए किए गए संघर्ष को यत्र-तत्र चित्रित किया है।

उनकी कविताएँ मन के भावों को , मनुष्यता को, सामाजिक संघर्ष को और मानवीय मूल्यों को अपने में समाहित किए हुए हैं। संयुक्त परिवारों के बिखरने, संस्कारों के क्षीण होने, रिश्तों में ईर्ष्या-द्वेष के प्रस्फुटित होने और विनम्रता के भावों को समाप्त होने से जो मन में कुंठा के बिंब उत्पन्न हुए और जिसे कवि मन ने अपनी

कल्पना के माध्यम से पहचाना, वही शब्दों के रूप में उम्मीद की लौ में अवतरित हुआ । आज का समय, जहाँ महंगाई चरम सीमा पर हो ,संचार माध्यम प्रतिक्षण सुदूर देश के समाचार प्रस्तुत करते हों, दूरदर्शन , मीडिया के कार्यक्रमों से झूठ, फरेब परोसा जा रहा हो, जिसमें जीवन का अधिकाधिक समय चला जा रहा हो और नई पीढ़ी बड़ों को आदेश देने की मुद्रा में हो,ऐसी स्थितियों में भावुक कवि मन कहीं न कहीं निश्चित रूप से दुखी होता है और संवेदना से युक्त कविताएँ प्रस्फुटित होती हैं। यथा -

मुझे अब गुलाब में

खुशबू नज़र नहीं आती है

क्योंकि मेरे नथुनों के छिद्र

बंद होते जा रहे हैं ।

लोग चीख रहे हैं

तड़प रहे हैं

जान भी गँवा रहे हैं

और मेरे कान बंद पड़े हैं।

दिलीप कुमार पांडेय की इन कविताओं में बहुत कुछ नया भी है ,भौगोलिक परिस्थितियों से सराबोर भी है और मातृभूमि की मिट्टी की सोधीगंध का समावेश भी है। गाँव के किसान और मिट्टी के अन्योन्याश्रित संबंधों को कवि इस प्रकार लिखता है-

कृषक मिट्टी में बसता है

मिट्टी में रमता है

अन्न की कद्र करता है

परिवार का पोषण करता है । मिट्टी का लेपन प्रिय है उसे

जानवरों की देखभाल भी

अपनी रोटी

और चारों का इंतजाम भी

सारा दिन खेतों- खलिहानों में शाम अपनी मड़ैया की ओर

ढलता सूरज उसका समय चक्र।

इस संग्रह की अन्य कविताएँ रोटी की जुगत में, आकृति बिगड़ जाती है ,जाने वाले ,कहाँ जाते हैं, कारवां मिलता गया ,चलने की उम्मीद में, उन्मुक्त उड़ान की, पतलून,

घाघ, हैवानियत से ऊपर उठकर ,आडंबर, मैं फिर से, तंत्र में सब बिक चुके हैं, प्रेम की जगह, दो खेमों में, बहस और मुद्दे, दाखिल चोर,बदलाव, कृषक, बनावटी चेहरे, फूलों की बढ़ती टोली,सिर्फ ज़िन्दगी, सिर्फ एक नाटक, कचोट,बस इंसान,तीसरी क्लास, वह कौन ?, धरती और आसमान ,नफरत, मेरा प्रेम पत्र पढ़कर ,कुछ तो है, उस पथ पर ,बैठक, देश और राष्ट्र , अंतराल ,पत्थर के संगमरमर चिराग, मनगढ़ंत आदमखोर, मूकदर्शक, आखरी गुलामी, जलता हुआ सवाल, प्रतिज्ञा, लिखते लिखते अब विराम समय, खाली हाथ ,नब्ज,पहिया आदि शीर्षक की कविताएँ समय के साथ चल रहे जीवन संघर्ष को चित्रित करती हैं। कवि के मन के उद्गार शब्दचित्रों के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

आशा है, युवा कवि दिलीप कुमार पांडेय का अगला संग्रह इससे भी अधिक गंभीर और पठनीय होगा। उनका रचना कर्म नई कविता को नए आयाम देगा, पाठक उनसे जुड़ेंगे। इन्हीं उम्मीदों के साथ मैं अपनी शुभकामनाएँ उन्हें प्रेषित करता हूँ।

******

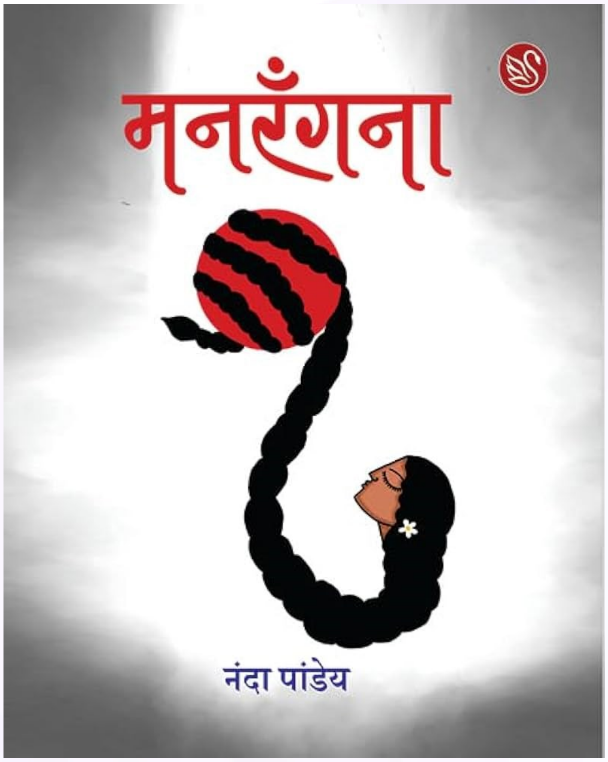

पुस्तक समीक्षा- मनरँगना (काव्य- संग्रह)

लेखक– नंदा पांडेय

प्रकाशक- स्वेतवर्णा प्रकाशन दिल्ली

समीक्षक- डॉ.कविता विकास , भारत

संपर्क- nandapandey002@gmail.com

मनरँगना

नंदा पांडे का सद्य प्रकाशित 'मनरँगना', कविता-संग्रह श्वेतवर्णा प्रकाशन से आया है। इस संग्रह में उनकी एकहत्तर कविताएँ हैं। बतौर नंदा जी उनकी व्यस्त ज़िंदगी से कुछ पल चुराना इतना मुश्किल रहा कि लेखन कार्य बहुत मंथर गति से चला है लेकिन अंतर्मन में सिमटे लमहों के अहसासात कहीं न कहीं पन्नों पे उतरने को व्याकुल रहे हैं। जैसे - जैसे समय मिलता गया, वही अनुभव कविताओं के रूप में मनरँगना के पृष्ठ रचते गए।

संग्रह में अलग - अलग रंगो- मिज़ाज की कविताएँ हैं। कवयित्री के पास अनुभव और भावनाओं का बृहद आयाम है। कुछ कविताएँ मनुष्य के अंतर्द्वंद्व, उसकी पीड़ा ,उसके संघर्ष और तकलीफ़ को प्रकट करते हैं तो कुछ में प्रकृति की चिंता है लेकिन इस चिंता में भी उन्होंने अपनी पीड़ा को बुनकर उनका मानवीकरण कर दिया है। कवयित्री ने स्त्री प्रधान कविताओं पर ही ज़्यादा बल दिया है। स्त्री के आस - पास सारी दुनिया केंद्रित होती है और दुनिया में दुःख - सुख दोनों के बिम्ब और रंग होते हैं,इसलिए उनकी कविताओं में ज़िंदगी के सारे रंग मिलते हैं। प्रेम स्त्री का मौलिक स्वर है, प्रेम के ताने - बाने में वह एक निश्छल संसार की छवि देखती है, इसलिए अपने

प्रिय के मन को अपने रंग में रंग कर वह प्यार के ज्वार में सराबोर होने की कल्पना में अपना जीवन सार्थक मानती है। लेकिन मन के अनुसार होता जहाँ है?

"वो निकल पड़ी है मनरंगना के मसान की

कपाल- कुंडला बनने ,यह जानते हुए भी कि जीवन, अंधे का सपना और उम्मीद!

एक असफल वेश्या की प्रतीक्षा से ज़्यादा कुछ भी नहीं।"

यही तो यथार्थ है ज़िंदगी का !

नंदा जी की कविताएँ एक अहसास है जिसे उन्होंने जीया है। ज़िम्मेदारियों के अंतर्गत कुछ महीने तक कलम चलती भी नहीं है लेकिन मन के कोने में घटनाएँ, अपना स्थान बना लेती हैं और बाद में पन्ने पर भी उतर जाती हैं। उनके मन की पीड़ा, टीस, आह्लाद और आनंद उमड़ - घुमड़ कर जब भी शब्दों का आकार लेकर बरसते हैं ,कवयित्री हल्का महसूस करती हैं।

" जब मेरी तकलीफ़ अपनी अभिव्यक्ति के लिए

खोज रही थी प्रेम का आश्रय,मेरे उस वक़्त में,मेरे हर उस लम्हे में तुम,जीते - जागते ताज्जुब की तरह ,बेसुध रहे अपनी आत्मलीनता में"

कवयित्री के लिए कविता एक धर्म है। आमजन की भाषा में अपने जज़्बात को साकार करती हैं। गूढ़ बातें भी शालीनता से रखती हैं। उनका सादगी भरा शिल्प नए कवियों के लिए चुनौती और प्रेरणास्रोत है। उनकी कविताएँ परिवर्तन और सुधार के लिए आमादा हैं।

"अब नहीं भटकना है/मन के आवर्तन में /दुःख के आँसू से /नहीं लिखनी कोई कविता "

या फिर देखिए, कवयित्री ने क्या कहा है," कलम अब स्मृतियाँ नहीं स्वप्न लिखेगी,फूल,पर्वत और नदी का बहाव लिखेगी"

उनके अवचेतन में कल्पना , स्वप्न,विचार, चिंतन, अवसाद और आक्रोश का एक ऐसा संसार है जिससे हमारी चेतना प्रायः अनभिज्ञ रहती है। बाहर के क्रियाकलापों से आत्मा पर जो भार पड़ता था वह अंदर ही अंदर खुलने लगता है जो उनके लेखन का आधार बन जाता है। नंदा जी की कविताएँ उनके मनोविज्ञान को समझने के लिए काफ़ी हैं। ये कविताएँ उनकी सोच का आईना हैं। सारी कविताएँ क्योंकि गद्य कविताएँ हैं इसलिए उन्हें अपनी भावनाओं को विस्तार देने का ख़ूब मौक़ा मिला है। छंदमुक्त कविताएँ कभी - कभी इतना विस्तार पा जाती हैं कि कहीं - कहीं

अपने उद्देश्य से विमुख हो जाती हैं। नंदा जी की कुछेक कविताओं में यह देखने को मिला है,लेकिन जिसके पास शब्दों के अथाह भंडार हों और भावनाओं के विस्तृत आयाम हों वहाँ ऐसी छोटी - मोटी ख़ामियाँ क्षम्य हैं। 'हर बार ' , 'मैं ज़िंदा तब भी थी ' आदि कविताएँ थोड़ी सपाट हो गयी हैं लेकिन इनके आरम्भ में आकर्षण है।

कवयित्री के हुनर और विलक्षण प्रतिभा से उनके परिवार वाले भी परिचित हैं ,इसलिए उनके श्रमसाध्य काम में सभी ने दिल खोल कर मदद की है। उनके पति और बच्चे, जीवन के विभिन्न सोपान पर उनके साथ रहे हैं। इसे उन्होंने ईमानदारी से अपनी भूमिका में लिखा है। भारतीय समाज में एक स्त्री परिवार की बुनियाद होती है जिसके इर्द - गिर्द सारे काम चक्कर काटते रहते हैं। उन्हें निबटाते हुए रचनाशील रहना नंदा जी की रचनाधर्मिता को दिखलाता है। बुकमार्क,सड़क के किनारे अलविदा आदि कविताओं में उन विषयों को छुआ गया है जिन पर आम आदमी की नज़र भी नहीं जाती होगी। यही तो कवि की दृष्टि है,जो,जहाँ न जाए रवि,वहाँ जाए कवि ' की परिभाषा तय करता है।

किसी भी काव्य में जितनी अधिक भाव - प्रवणता होगी, वह पाठक को अपनी जीवंतता से प्रभावित करता रहेगा। अनेक कविताएँ सामयिक धारा की हैं जैसे" सच्चाई", अष्टभुजा" ,"अब न्याय होना चाहिए" आदि।

" यह प्यास अपने समय की,सबसे क्रांतिकारी और घुटती हुई प्यास है,जिसको दफ़नाने की तैयारी हो चुकी है।"

ये पक्तियाँ कवयित्री की समय से उपजी पीड़ा को व्यक्त करती हैं। अपने पारम्परिक सौंदर्य बोध के शिल्प से परे यथार्थ का बोध कराती हैं। "चैत की रात" , 'अगहन की शाम " या "वसंत की आहट" जैसी कविताओं में मौसम के रंग में व्यक्तिगत जीवन की वेदना को ही उकेरा गया है।

"चैत की रात का समाँ ऐसा कि,बिना किसी अनुष्ठान के उसने, अपनी अतृप्त कामनाओं में रंग भरने का निश्चय कर लिया।" नंदा जी भावुकता में भी भावना और तर्क के बीच संयोजन करना जानती हैं। उनका आत्ममंथन उन्हें हर परिस्थिति के साथ सुगम्य बनाता है लेकिन कभी - कभी कविता के अंत तक कोई निष्कर्ष नहीं निकल पाता है तो उसे भी स्वीकार करते हुए पाठकों पर निर्णय छोड़ देती हैं।

"मैं नहीं समझ सकी कि,प्रतिशोध तुम्हारा किससे है,मुझसे या मेरे सपनों से!"

"आधा चाँद" का अंत भी संशयपूर्ण है , इसलिए पौराणिक कथनों पर आधारित करके लोगों के ऊपर यह निर्णय डाल दिया जाता है,"लोग कहते हैं,उसकी खुली आँखों में,आज भी दिखता है,आधा चाँद।" कवयित्री का निजत्व उनकी हर कविता में परिलक्षित होता है। मुक्त छंद की कविताएँ परिचयात्मक और चिंतनात्मक ज़्यादा होती हैं । "उस रात" आज की स्थिति का वर्णन बहुत सशक्त भाव से करती है। रात के अँधियारे में किसी की अस्मत से खिलवाड़ ताउम्र उसकी आँखों को स्याह बना देता है जिसे कवयित्री ने कहीं भी बलात्कार शब्द का उल्लेख किए बिना बड़ी कुशलता से ज़ाहिर किया है। सामयिक परिवेश ने नंदा जी को कवयित्री तो बनाया है लेकिन कभी - कभी परिस्थितियाँ क्षुब्ध भी कर देती हैं और निराशा में कह उठती हैं, "अब आत्मा भी नहीं चाहती स्वीकारना/ वासंती भावनाओं के झूले पर झूलते शब्दों का उतरना .... आजकल उतरते नहीं शब्द कविता बनकर।

"अस्तित्व खोजती स्त्रियाँ "में कवयित्री ने एक आम स्त्री की दिनचर्या ख़ास कर संघर्षरत स्त्रियों की ज़िंदगी का जीवंत चित्र उकेरा है।छोटी - मोटी नौकरी से घर चलाती ये स्त्रियाँ खाना बनाने से लेकर बीमार पड़े लोगों और बच्चों को ख़ुश रखने के सारे जद्दोजहद को झेलती हुई भी कितनी कर्मठ बनी रहती हैं।

जैसा कि मैंने पहले ही कहा है,नंदा जी की अधिकांश कविताएँ स्त्री जीवन के इर्द - गिर्द घूमती हैं,जिनमें कहीं आत्मानुभव तो कहीं वातावरण का प्रभाव है। स्पर्श, सम्बंध और साथ की प्रगाढ़ता का कारण प्रेम तो है ही, कविताओं का केंद्रीय भाव स्त्री केंद्रित होकर भी उसी प्रेम और विश्वास की माँग करता है जिसे उनकी कविताओं में पाया जा सकता है। भाषा, कथ्य और शिल्प का अच्छा तालमेल है। इस पुस्तक को पढ़ कर लगता है कि कवयित्री के पास अनेक विषय हैं रचने को और साहित्य जगत में एक उज्ज्वल भविष्य की संभावनाओं से परिपूर्ण हैं। व्यष्टि से समष्टि की ओर उन्मुख होना ही रचनाकार का लक्ष्य होता है। आशा करती हूँ इसे ध्यान में रखते हुए नंदा जी निरंतर कर्म साधना में रत रहेंगी हमें उनके नए कविता संग्रहों का इंतज़ार रहेगा।

****

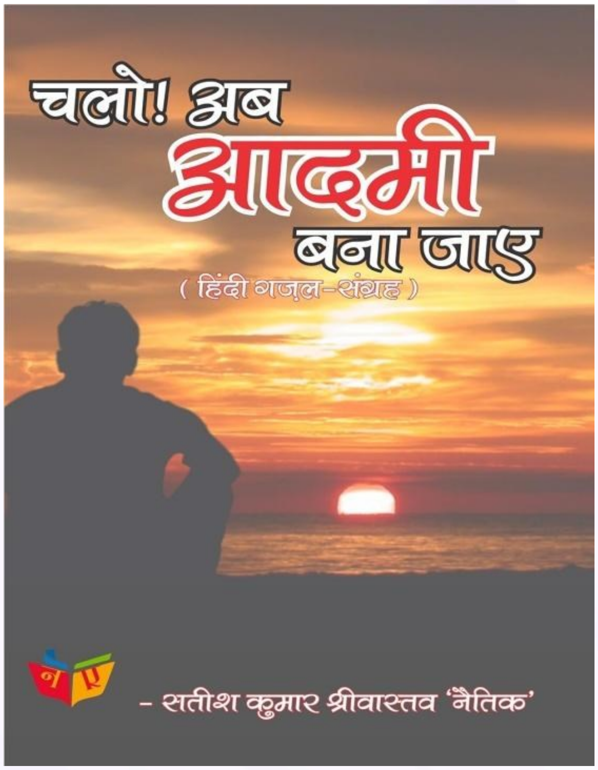

पुस्तक समीक्षा- चलो! अब आदमी बना जाए (ग़ज़ल संग्रह)

लेखक– सतीशकुमार श्रीवास्तव 'नैतिक'

प्रकाशक- नवजागरण प्रकाशन

समीक्षक- डॉ. अंगदकुमार सिंह , भारत, असिस्टेण्ट प्रोफेसर जवाहरलाल नेहरू पी.जी. कॉलेज, बाँसगाँव

संपर्क- anagadkumarsingh01@gmail.com

आदमीयत का इन्तख़ाब है चलो! अब आदमी बना जाए

दरअसल, ग़ज़लगो सतीशकुमार श्रीवास्तव 'नैतिक' का 'चलो! अब आदमी बना जाए' अभिसंज्ञक ग़ज़ल-संग्रह आदमीयत का मुक़म्मल इन्तख़ाब है।

सन् 2017 में 'नवजागरण प्रकाशन, नयी दिल्ली' से छपकर समाज के समक्ष आने वाला यह ग़ज़ल-संग्रह 'नैतिक' का पहला प्रयास है तथा 100 पृष्ठों वाली इस पुस्तक में कुल 84 ग़ज़लें संग्रहित हैं। हालाँकि यह सच है कि इसकी कई ग़ज़लें ग़ज़ल के रदीफ़ और क़ाफ़िये के पुराने मानदण्डों को तोड़ती हुई नज़र आती हैं लेकिन इससे इनकी धार और इनका प्रभाव कम नहीं होता बल्कि बढ़ जाता है। वैसे भी हिन्दी के प्रसिद्ध ग़ज़लकार आचार्य सत्यनारायण त्रिपाठी ने अपने ग़ज़ल-संग्रह 'शिखरों के सागर' में कहा है कि, ''ग़ज़ल एक हसीन ज़िदगी है, छोड़ो बहर की बातें कह डालो।'' श्रीवास्तव के ग़ज़ल-संग्रह में कहीं राजनीति का सजीव चित्रण है तो कहीं कृषक जीवन का, कहीं धर्मनिरपेक्षता की वकालत

मिलती है तो कहीं साम्प्रदायिकता का खण्डन-मण्डन, कहीं ग़रीबी का यथार्थ वर्णन है तो कहीं प्रेम का।

अधिकारी हाड़-माँस के न होकर पत्थर के बुत हो गये हैं। इतना ही नहीं इन सभी की मिली-भगत के कारण जो लोग मुजरिम शाह बनकर खुलेआम घूम रहे हैं तथा संत-ईमानदारों पर पर पहरे लगा दिये गये हैं। इसलिए सतीश कहते हैं कि, ''शहद के भ्रम में पड़कर, जहर मत थाम लेना/ये मीठे लोग अक्सर जखम देते हैं गहरे।''1

आज राजनीतिज्ञों द्वारा ऐसी आग लगा दी गयी है जिसमें जनतन्त्र, जनतन्त्र न होकर रणतन्त्र हो गया है। इस पर ग़ज़लकार ग़ज़ल की धार को पैनी करते हुए कहता है, ''जल रहा है मुल्क, जमकर रोटियाँ अब सेंकिये/राजनीति के लिए, माहौल चंगा हो गया।''2

कहा जाता है कि दर्द बाँटने से कम होता है पर समय के साथ यह बात उल्टी पड़ती नज़र आ रही है। यदि लोग जान जाते हैं कि इनको दर्द है तो मज़ा लेते हैं और मज़ाक उड़ाते हैं। इसलिए कवि की मान्यता आज के ज़माने के हिसाब से बहुत ही सटीक लगती है कि, ''मुस्कुरा करके अपने दर्द दबाए रखिए/लोग मज़बूरी में दूरी से मिला करते हैं।''3 कवि ने धर्मनिरपेक्षता पर अपनी क़लम चलायी है तो साम्प्रदायिकता पर भी। लौकिकता का बयान किया है तो दर्शन का भी, राजनीति पर लेखनी की धार को पैनी की है तो गरीबी पर भी। वर्तमान में जो समाज बन रहा है उसमें हर जगह ऊँच-नीच, मारकाट का वातावरण सृजित हो गया है। इसलिए सतीश ने कहा है, ''ज़मीं को देखकर ख़ुदा भी रो रहा होगा।''4

ग़ज़लकार ने लोकतन्त्र, ग़रीबी, विज्ञान, प्रेम, परिवार, बाज़ार, आतंकवाद पर भी व्यापक दृष्टि डाली है। बेटा-बेटी पर भी विचार करते हुए कवि कहता है कि, ''बेटा यदि कुल का दीपक है/दो-दो कुल का मान है बेटी।''8 ग़ज़लिमा के समकालीन इतिहास में 'नैतिक' का यह ग़ज़ल-संग्रह एक भास्वर द्वीप बनकर उभरा है। ग़ज़ल का नया और ताज़ा तराना पाने के लिए ग़ज़ल-प्रेमियों को इसके समीप बैठना होगा। इस रचना में ग़ज़ल, गीत, दोहा तथा काव्यभूमि के दूसरे शैली-विन्यास समेकित होकर ग़ज़ल की अलग ज़मीन दिखलाते हैं। ग़ज़लकार की उस्तादी इस हैसियत में दिखलायी पड़ती है कि वह अपने पाठक को क़दम-क़दम पर रोककर दुहराने, गुनगुनाने और कुछ निकालकर साथ लेकर निकल जाने का विनम्र आग्रह करता है। *****

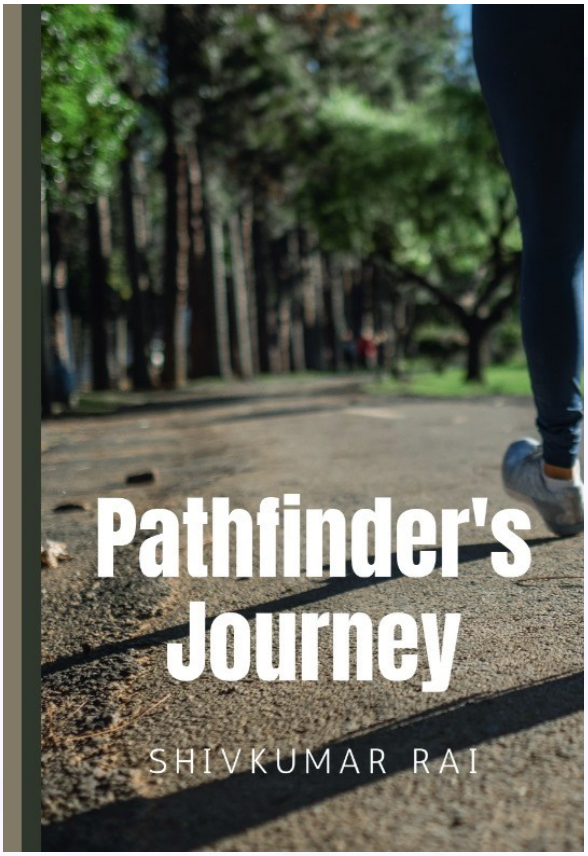

पुस्तक समीक्षा- पाथफाइंडर्स जर्नी (संस्मरण)

लेखक– शिवकुमार राय

प्रकाशक- नोशन प्रेस

समीक्षक- विनोद कुमार दूबे, सिंगापुर, प्रवासी साहित्यकार

संपर्क- vinod5787@gmail.com

पाथफाइंडर्स जर्नी

यह किताब शिवकुमार जी की लेखन की दुनिया में आगाज़ करती है । खेलकूद में विशेष रूचि रखने वाले शिवकुमार जी ने इस किताब में अपने अनुभवों को कलमबद्ध किया है । इनका लेखन सरल और नैसर्गिक है जिसे पढ़ते हुए एक सामान्य पाठक जुड़ाव महसूस करता है ।

शीर्षक की बात करें तो "' Pathfinder's Journey " एक रहस्यमयी सा शीर्षक है जो सतह की बाहरी यात्रा के साथ -साथ भीतर की यात्रा का ज़िक्र करता है।

मैराथन, पर्वतारोहण , पैदल यात्रा , सीढ़ियों पर चढ़ना जैसे सच्चे अनुभवों को इस संस्मरणनुमा किताब की कथावस्तु में बड़े ही करीने से सजाया गया है। हरेक अध्याय में एक नयी चुनौती, उससे गुजरने का व्याख्यान और उससे मिली सीख का वर्णन है। यह किताब शारीरिक और मानसिक चुनौतियों के हर पड़ाव और हर उतार-चढ़ाव दिखाती है। आप किस तरह योजना बनाते हैं, किस तरह मुश्किलें आती हैं, कई बार हिम्मत हारने वाले होते हैं कि आखिर में भीतर से एक आवाज़ आती है कि " बिना कोशिश नहीं

हारेंगे" . इस किताब में यह भावना कई बार पाठक को प्रोत्साहन से सराबोर कर देगी।

शिवकुमार जी ने यह संस्मरण आत्मकथात्मक शैली में लिखा है। इसके सारे पात्र वास्तविक हैं। पात्रों के नाम, उनकी कही उक्तियाँ और उनसे मिले प्रोत्साहन जस का तस लिखा गया है। इसमें भारत के ही नहीं बल्कि विदेशी पात्र भी हैं जो मलेशिया के पर्वतारोहण वाले संस्मरण में बड़े सटीक लगते हैं। इस तरह के पात्र हमारे रोजमर्रा के जीवन में आपको आराम से नज़र आ जायेंगे।

शिवकुमार जी ने अपनी सशक्त लेखन-शैली द्वारा शारीरिक और मानसिक चुनौतियों का बखूबी वर्णन किया है। इस संस्मरण में घटनाक्रम अपनी धाराप्रवाह भाषा शैली के साथ बढ़ता है इसलिए अंत तक इसे पढ़ने में रुचि बनी रहती है। भाषा सरल है और शैली में हास्य का पुट भी मिला हुआ है। यही इनके लेखन की विशेषता है जो इसे आमजन के लिए पठनीय बनाता है।

यह संस्मरण २०१६ से २०२४ के बीच की यादों का पिटारा है। तकनीकी का प्रयोग, जगहों के नाम , बात करने का तरीका, रहन सहन सब इसी समय को दर्शाते हैं। इस किताब में ढेरों उक्तियाँ लिखी गयी हैं जो काफी मोटिवेशनल हैं और पाठक के मन पर अमिट प्रभाव छोड़ती हैं। इस किताब को पढ़ते हुए आप जूते के फीते कसने को तैयार हो जाएँगे। एक सन्देश जो यह किताब देने में सफल हुई है वह है कि " मन के जीते जीत है, मन के हारे हार "

शिवकुमार जी से अनुरोध है कि अपने अनुभव यूँ ही साझा करते रहे ।

नोशन प्रेस द्वारा प्रकाशित यह संस्मरण, आप भारत में अमेज़ॉन से और सिंगापुर में सीधे लेखक से संपर्क करके प्राप्त कर सकते हैं ।

****

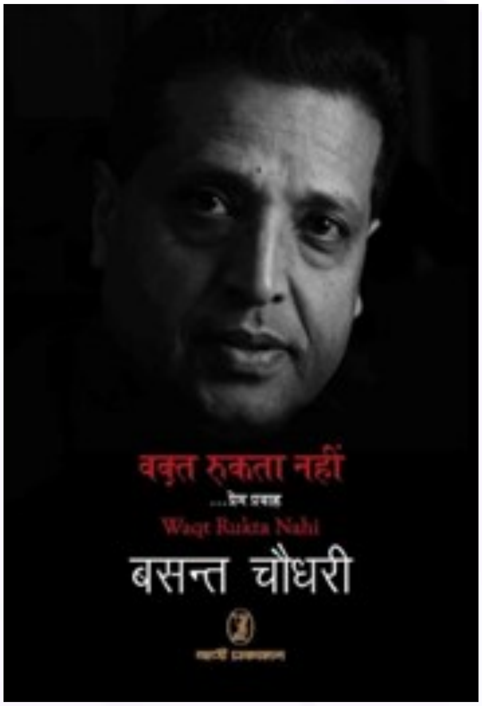

पुस्तक समीक्षा- वक्त रुकता नहीं (काव्य-संग्रह)

लेखक– बसंत चौधरी

प्रकाशक- वाणी प्रकाशन

समीक्षक- चित्रा गुप्ता, सिंगापुर , प्रवासी साहित्यकार

संपर्क- madhurbhaashi@yahoo.com

वक्त रुकता नहीं-जीवन प्रवाह

समय के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता । संत कबीर ने भी कहा है-"काल करे सो आज कर,आज करे सो अब ।" वक्त के सन्दर्भ में अध्यापकों तथा अभिभावकों द्वारा सतत चेतावनी मिलती रहती है। बसंत चौधरी जी की काव्य पुस्तिका "वक्त रुकता नहीं" में ऐसा क्या नवीन है जो पढ़नी चाहिए ? इसी उत्सुकता का शमन करने के लिए काव्यपुस्तिका के पन्ने पलटने लगी । "वक्त रुकता नहीं" काव्यपुस्तिका में वक्त के संग पुरानी स्मृतियों में नूतन भावों को सहजता से सहेज कर रखा है । समाज के प्रति उत्तरदायित्व, बसंत चौधरी जी ने कविताओं के माध्यम से निर्वाह किया है ।

पुस्तिका में सरल अभिव्यक्ति से ओतप्रोत ९१ कविताओं के मनकों से माला गुंथी हुई है । संग्रह में दिल शीर्षक से अनेक कविताएँ हैं "हारे दिल से" में भावुकता से भरे एक व्यावहारिक हारे दिल की बात है, "दिल का रिश्ता" और "दिल की आँखें" में कुछ अनजान आकर उतर गये जाने कब भीतर, एक ही भाव की अभिव्यक्ति भिन्न प्रकार से की है । "दिल के रिश्ते"में रिश्तों में आत्मा से जुड़े, स्वार्थ निस्वार्थ के अलावा विभिन्न प्रकार के रिश्तों की आभिव्यक्ति की है । जो न किसी

का साथ तकता है "दिल" में संदेश दिया है । हर किसी के दिल में दर्द पलता है "दिल के छालें" में मार्मिक सत्य का समर्थन किया है । रिश्ते" में रिश्तों को जीवंत रखने के लिए स्नेह तथा विवेक दोनों की अनिवार्यता बताई है । समग्र रूप से दिल वाली कविताओं में कवि ने दर्शन उड़ेल दिया है ।

काव्य पुस्तिका का शीर्षक है –"वक्त रुकता नहीं " वक्त पर कवि का दृष्टिकोण उनकी वक्त शीर्षक पर आधारित कविताओं में परिलक्षित होता है । आओ सम्बन्ध में रोचकता पनपायें ,नेह और आत्मीयता के नीड़ बनाएँ...बहुत ही प्यारा सन्देश मधुर शब्दावली में दिया है "वक्त का मिजाज "में। पकने से पहले फल तोड़ना और वक्त से पहले कही बात दोनों का महत्त्व नहीं है "वक्त से पहले" में यही अभिव्यक्त किया है ।

अडिग खड़े रहना.. बाधाओं से जूझना..ये मात्र जुमले नहीं है...वाह आत्मविश्वास जगाने वाली कविता है "वक्त के साथ" । "वक्त सगा है "में लेखक ने पाठकों की मन: स्थिति का चित्रण किया है ।

।"अपने ही जन्मदिन पर " कवि ने क्या कमाल का लिखा है –आज के दिन लगता है खुद को ढेर सारा प्यार दूँ । दूसरी ओर "थका हारा आदमी "संघर्षों में सबको खुश रखने में अपनी सम्वेदनाओं को छिपाए रखता है । आधार हीन सम्बन्ध केवल दिखावा होते हैं "सम्बन्ध "कविता पाठकों की कसौटी पर खरी उतरेगी । "जीतता हौसला है"..."हार –जीत में निराशा में आशा का नमक बहुत ख़ूबसूरती से डाला गया है । विपदा में मुख से माँ न निकले यही "माँ "कविता का निष्कर्ष है । पुत्री को बड़ा होते देख पिता की बेचैनी "बिटिया "में पढ़ें । पचपन में बचपन की नटखट यादें "सयाना बचपन "पढ़कर सरल मुस्कान आती है । वर्णनात्मक शैली में "राखी के धागे " पवित्र स्नेह की कविता " है । दर्द और व्यंग्य का मिश्रण "अपने जो खो गये " को पढ़कर मन में चुभन होती है ।"कड़वे शब्द " में चन्दन और नीम से तुलना कर व्यक्ति के बोल के अच्छे और बुरे पक्ष को उजागर करने की चेष्टा की है । पिता के कोमल और कठोर स्वभाव में संतुलन की कविता है "पिता " । पिता में माँ का प्रसंग न डालकर पिता के विषय में अधिक लिखा होता तो कविता की सार्थकता बढ़ती । "मधुर पल " बहुत सुंदर बिम्ब और उपमान से भरी कविता पढ़कर आनन्द आयेगा । दुःख की तुलना अवांछित मेहमान से की है "दुःख-सुख "में । समय के साथ कदमताल करती...सकारात्मक निष्कर्ष "खूबसूरत ज़िन्दगी" में। मेरी वजह से कोई रोये नहीं... बहुत निश्छल ख्वाहिश "ख्वाहिश " में । हर ख्वाहिश जीने

को उकसाती है यह सत्य "आख़िरी साँस तक" में पढ़िए ।

कद – काठी से दुर्बल होने पर व्यक्ति अपने संकल्प से प्रत्येक कठिनाई पर विजय प्राप्त कर सकता है "संकल्प" में दीये और बाती से तुलना कर हिम्मत दी है । "दृढ़ संकल्प" में अनन्य प्रेमी दशरथ मांझी का उदाहरण देकर बताया है कि प्रयत्नशील को लक्ष्य अवश्य मिलता है । जीवन संग्राम में संतुलन बनाये रखने की कवि ने कामना की है "संतुलन " में । चित्रात्मक शैली में "आकृतियाँ " नेत्रों के समक्ष भव्य चित्र उकेरती हैं । "युद्ध" और "सच्चाई के रण प्रांगण में" दोनों ही आत्मविश्लेषण की कविताएँ हैं । "सौन्दर्य" में साधारण बात को असाधारण रूप से कविता में पिरोया है । "मोती या नक्षत्र " में बहुत प्यार से बिम्ब पिरोये गये हैं कल्पना के व्योम , दर्द के बादल... लाजवाब । अपरिग्रह को जीवन का मूलमंत्र मानने वाले भामाशाह तथा गृहस्थ जीवन में संन्यासी की भांति रहने वाले का चित्रण "श्रेष्ठ ऋषि" में कवि ने मीठी औषधि की भांति संदेश दिया है । विरक्ति और उदासी के भाव "बहुत दूर "में मिलते हैं । मनुष्य का जीवन भी रेत की तरह बिखरा हुआ है यही भाव डाले हैं "रेत की तकदीर में" । सद्भावनाओं की झलक मिलती है "साहित्यक व्यापारी " में ।

कविता और प्रकृति का जन्मो –जन्मो का रिश्ता है । काव्यपुस्तिका में कवि ने प्रकृति के सौन्दर्य को नूतन परिप्रेक्ष्य में भी रखने का प्रयास किया है ।"बसंत" में उल्लसित मन को मृग छौना तथा वृद्धों का वृंदावन की गलियों की याद आने पर मन कह उठता है –दिल तो बच्चा है जी । उदास मन को सुख के रंगों में रंग जाते हैं प्रकृति के अनुपम दृश्य । नदी की धारा –संघर्ष का प्रतीक है । प्राकृतिक बिम्बों द्वारा उत्साह और जोश भरती कविता " जूझना पड़ेगा " । जंगलों , नदियों और पहाड़ों को कठिनाई का प्रतीक मानकर, जीवन को नैया के रूपक में सजाकर "जीवन की परिभाषा " लिख डाली ।

जीवन के विषय में कवि ने कविताओं द्वारा सुझाव दिए हैं । "यूँ याद आई ज़िन्दगी " पुराने खतों में एक के ऊपर दूसरी यादें आती चली गई । द्वेष को मृत्यु सम कहकर जीवन की नवीन परिभाषा गढ़ दी "जीवन मृत्यु" में । भौतिक संसाधनों में न उलझकर खुश रहना चाहिए "आनन्द" कविता में गहरी बात कही गई है । ठहराव तो बना देता है मानव को पत्थर "चलना ही जीवन " में व्याख्या की है

मानव धरती का मालिक होने के भ्रम में आपाधापी करता है "मानव स्वभाव "में कवि ने स्वयं के साथ पाठकों को भी चेताया है । बिल्ली की तरह झपट्टा मारकर...बचपन में

सुनी इस बात को पढकर होंठों पर मुस्कान आ जाती है । बंगले में बंद मानव सुबह के वास्तविक आनन्द को भूल गया है । संदेश युक्त कविता है "प्रभात गान ।" सब सुख होने पर भी मानव अपनी जन्मस्थली को सदैव याद करता है ।"गो धूलि की धूल" में ग्रामीण जीवन की जीवन्तता को दर्शाया है । व्यक्ति को नवजात शिशु की भांति चिंता मुक्त तथा शांतिपूर्ण जीवन जीना चाहिए यही बात "सुहानी सुबह " में समझाई है ।

गाँव की संकरी गलियाँ ,फूलों पर तितलियाँ ,चूजों के संग चिड़ियाँ , वायु की भीनी खुशबू मिलेगी आपको "भीनी खुशबू "में । "नदी" के माध्यम से मनुष्य को मर्यादा , धैर्य और सीमा में रहने की सीख दी है ।

नींद जीवन में अनिवार्य है-स्वास्थ्य की दृष्टि से और नव सृजन के लिए भी। कवि ने "नव सृजन" में इसी ओर इंगित किया है । शरीर और मस्तिष्क को आराम देने के लिए नींद ज़रूरी है "नींद " और "गहरी नींद "में आपको अपने क्यों के उत्तर मिलेंगे । भाग्यशाली होते है वे जो जिन्हें अल्प परिश्रम से लक्ष्य मिल जाता है । "स्वप्न"में रामचरित मानस के गिलहरी प्रसंग से यह तथ्य स्पष्ट किया है ।

अज्ञानता के अन्धकार को दूर कर दिव्य उजाला विकीर्ण करें गहरी बात "महानायक " में देखें । ढाई आखर प्रेम का प्रतिदान प्रेम ही होगा बाकी सब बिकाऊ है , कमाल की बात पढ़ें "दुनिया " में ।

"झोंपड़ी " में पढ़ें झोंपडी के मन की बात...सुंदर मानवीकरण । खुद भूखा रहकर जीवन व्यतीत करता है , मार्मिक अभिव्यक्ति की है "कृषक का पसीना " में

"कर्म की जीत "में शब्द और कर्म में कौन विजयी होता है इसको भलीभांति बताया गया है । सबके हित और सबके सुख की कामना करने वाला ही लोगों के दिलों में स्थान बनाता है "उच्चत्तम शिखर पर" प्रतीकात्मक शैली में सुंदर अभिव्यक्ति । प्रत्येक घर में खुशियाँ हों "दीये जलाएँ" में इस खुशी का स्वाद चखें । मत सजा निराशा का कोना ... ईश्वर है जादूगर उस पर और स्वयं पर विश्वास रख "तेरा हिस्सा वह खुद देगा" वाह ! बहुत खूबसूरत अंदाज । काव्य के समस्त रसों से सिक्त है "हँसती कविता" । आदर माँग कर प्राप्त नहीं किया जा सकता ? पढ़ें "अमूल्य आदर " में । सर्व धर्म सम्मान का संदेश दिया "कबूतर का कर्म " से । व्यंग्यात्मक शैली में एक झलक "आधुनिकता" की । आत्मविश्वास सीमा में रहे, द्रौपदी के प्रसंग से कवि ने इस तथ्य की पुष्टि "आत्मविश्वास" में की है । विकसित देशों ने

किस भ्रम जाल में मानव को जकड़ लिया है “हृदय की ज्योति” में लोगों की आँखें खोलने के लिए सच्चाई का बखान किया है । बोये पेड़ बबूल का आम कहाँ से पाय “दर्पण” कविता में इसी तरह के भाव मिलेंगे । “चादर ” में पढ़कर सोचेंगे कि कितने सामन्य शब्द के भिन्न – भिन्न रूपों का वर्णन किया है । अपनो के बीच रहते हुए भी संवाद हीनता...करूणा की पराकाष्ठा “अकेलापन” में दिखेगी । वसुधैव कुटुम्बकम से नव युग का निर्माण होगा “दिव्य उजाला ” के भाव हैं । धूप –छाँव से सुख –दुःख की तुलना की है कविता “उन्नति के द्वार” में ।

ईश्वर की महिमा पर भी कविताएँ संकलन में हैं । दौलत ,शोहरत सब देना पर अभिमान और आलस्य मत देना यही प्रमुख भाव हैं “अभ्यर्थना” में । सूफी शैली में रचित “ऐ मेरे मालिक” उर्दू की सरल शब्दावली से जड़ित प्रभु से फरियाद तथा प्रभु ने जो दिया उसका आभार मानते हुए आशीषों की अभिलाषा “अन्तस् की चाह” में देखने को मिलती है । चार लोग जब अर्थी तेरी उठायेंगे तब कर्म ही तेरे काम आयेंगे । मालिक से प्रीत लगाले “गीता सार विस्तार ” में बताया है ।

कवि के मतानुसार सराहना से अद्भुत प्रेरणा मिलती है “सराहना” में इसी प्रकार के भाव हैं ।

बिम्ब , उपमा , रूपक ,मानवीकरण , उत्प्रेक्षा अलंकार कविताओं के सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं । कवि ने आवश्यकतानुसार उनका प्रयोग किया है । पाठकों को यत्र – तत्र उनकी न्यारी शोभा कविताओं में परिलक्षित होगी ।

बहुत सी बातों और विचारों से पाठक निश्चय परिचित होंगे । जिस प्रकार शाकाहारी का चावल- दाल रोटी और सब्जी रोज खाने पर भी मन नहीं भरता उसी प्रकार ये कविताएँ भी पाठक को बार – बार पढ़ने पर आनन्द देंगी और भूले –बिसरे संदेशों को जीवन में अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेंगी । कविताओं में कहीं-कहीं विषयांतर और पुनरावृत्ति भी मिलती है रचनाकार उनसे बच भी सकता था । जो पाठक देवनागरी लिपि नहीं पढ़ पायेंगे उनके लिए कवितायें रोमन लिपि में लिखी गई हैं । ऐसे में क्या वे उनका भावार्थ समझ पायेंगे ? यह भी एक प्रश्न मन में उभरा है । अंततः बसंत चौधरी जी को शुभकामनाएँ ।

****

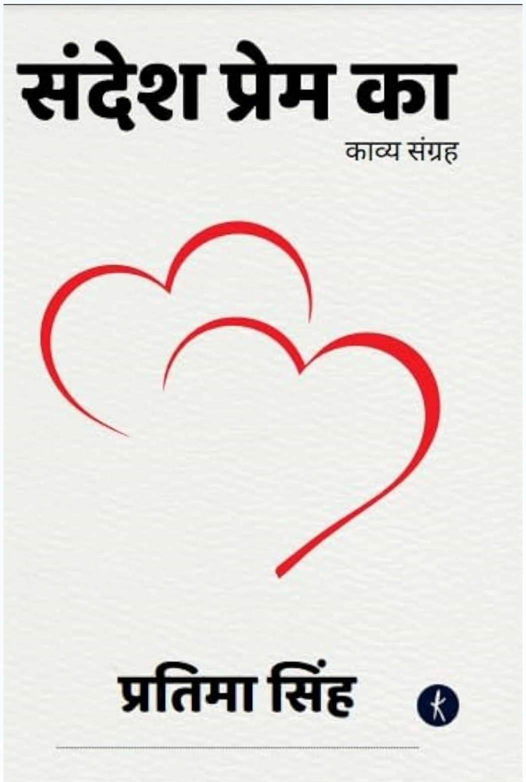

पुस्तक समीक्षा- सन्देश प्रेम का (काव्य- संग्रह)

लेखक– प्रतिमा सिंह, सिंगापुर

प्रकाशक- कविशाला

समीक्षक- डॉ. सविता रानी सिंह , भारत

पूर्व अध्यक्ष-महात्मा गांधी पी जी कॉलेज—भौतिक इलेक्ट्रॉनिक्स और कंप्यूटर विभाग

संपर्क- savitaranisingh@gmail.com

थके राही के लिए विश्राम हेतु एक छाँव है- "सन्देश प्रेम का"

'संदेश प्रेम का' मात्र एक काव्य संग्रह नहीं, एक संदेश नहीं, अपितु, थके राही के लिए विश्राम हेतु एक छाँव है, प्यासे पथिक के लिए अमृत कलश की छलकती हुई कुछ बूँदें हैं, प्रथम प्रयास में ही प्रतिमा द्वारा रचित यह एक पूर्ण विकसित खूबसूरत आकर्षक बगिया है, जिसमें रिश्ते रूपी फूलों की सुमधुर सुगंध आती है, इनकी कलम ने जो मादक मलय पवन बहाया है वो इतनी शीतल और सुखद है, कि पाठक का रोम-रोम कह उठता है- रिश्ते हों तो ऐसे, जीवन हो तो ऐसा, प्रेम हो तो भी ऐसा, गुरु भी ऐसा ही हो, ख़्वाब भी, मन भी, और तो और दिव्यता भी ऐसी ही हो, उत्सव भी इसी प्रकार रंगीन हो, स्मृतिपटल पर प्रकाश और स्थायित्व भी ऐसा ही हो, हमारे कर्मों से हमारी पहचान भी शाश्वत हो, अनुग्रह का अंदाज़ भी निराला हो, हमारी प्रार्थना - पुकार की सुनवाई भी हो, एहसास, प्रयास और सांस में भी प्रभु तेरा ही वास हो, आसक्ति में भी विरक्ति का भाव हो, मेरे गुरु मुझे चेतन और जागृत कर दो, चारों तरफ़ माधुर्य फैला दो, मेरे स्पंदन में ऐसी ऊर्जा भर दो कि जीवन में सुख सकून और संतुष्टि हो,

विवेकी जीवन में ख़ुशबू भर दो।

पढ़ते-पढ़ते मुझे ऐसा लगा कि जीवन भी एक उपवन है, जहाँ बदलते मौसम में भावनाओं की सत्यता भी बदल जाती है, हर रिश्ते की अपनी अहमियत अपनी पहचान है, उसकी ख़ुशबू को जिस ख़ूबसूरती से प्रेम की प्रतिमा ने पुष्प गुच्छ में सजाया है , वो काबिले तारीफ़ है, जिस नफ़ासत और नज़ाकत से शब्दों को तोड़ मरोड़ कर सरलता से पृष्ठों पर पेश किया है वो वर्णनातीत है, इनकी कलाकारी हमें भी पूर्ण इंसान बनने की प्रेरणा देती है।

इन्होंने साबित कर दिया कि शब्द ही ब्रह्म है, प्रत्येक अक्षर मंत्र है, प्रत्येक कविता इस कथन को सत्य साबित करती है। कवयित्री ने गुरु तथा माता-पिता को स्मरण कर समर्पित कर साक्षात ईश्वर को वश में कर लिया है। प्रत्येक पंक्ति में अध्यात्म झलक रहा है। इस काव्य संग्रह में बयासी (८२) कविताओं को प्रस्तुत किया गया है। माता -पिता से मिले संस्कार, गुरु से मिला आत्मज्ञान, रिश्तों में घुला प्यार, सबके अस्तित्व का एहसास, बंधन का महत्व, कण-कण में व्याप्त प्रभु के नूर का दर्शन किसी न किसी रूप में हर कविता में होता है।

आज के मशीनी युग में दिग्भ्रमित के लिए 'सन्देशप्रेम का' एक मार्ग दर्शक का कार्य करेगा, अकेलापन दूर करेगा, असली प्रकाश का दर्शन कराएगा और जीवन में सही डगर पर चलने की राह दिखाएगा।

ऐसे संस्कारयुक्त साहित्य हमारी धरोहर हैं, जो हमारी आस्था और असली अध्यात्म की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। संस्कारों की इस बगिया में जो भी घूमेगा, नैतिकता की डोर में बंधकर पूर्ण इंसान बन जाएगा।

अंततः इस काव्य-संग्रह को पढ़ने के बाद प्रतीत होता है कि प्रेम एक दीप की तरह होता है, जो प्रकाश देता है। प्रेम एक बांध की तरह है, जो नदी के प्रचंड प्रवाह को भी नियंत्रित कर बहुउपयोगी बिजली और सिंचाई हेतु पानी में बदल देती है। प्रेम का असली अर्थ है जुड़ना, जिससे भी जुडे उसके अंदर ईश्वरीय ऊर्जा को देखें उसे महसूस करें, और ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति समझ उसे उसी रूप में स्वीकार कर असीम सत्ता को आभार प्रकट करें।

लेखिका की प्रथम रचना एक प्रारंभ है, इसके पश्चात अनेक रचनाओं की लड़ी लगेगी, जो साहित्य और समाज दोनों को सुदृढ़ बनाएगी। लेखिका के उज्ज्वल और सार्थक भविष्य के लिए हमारी हार्दिक शुभकामना। **********

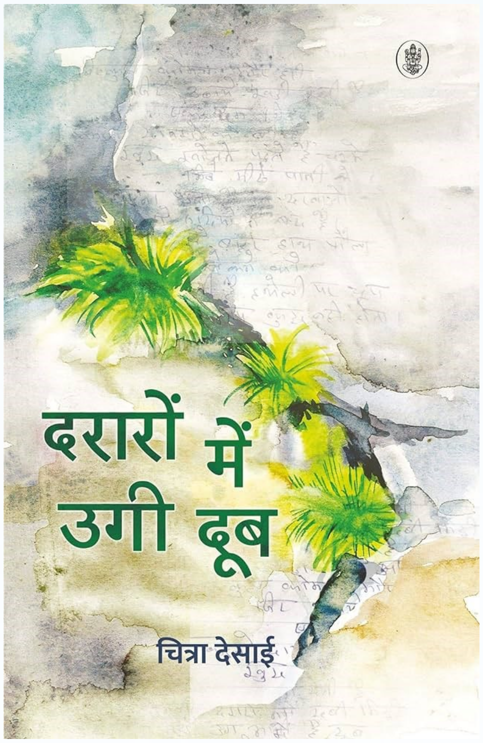

पुस्तक समीक्षा- दरारों में उगी दूब (काव्य संग्रह)

लेखक– चित्रा देसाई

प्रकाशक- राधा कृष्ण प्रकाशन

समीक्षक- डॉ. जया आनंद , भारत, प्रवक्ता,स्वतंत्र लेखन

संपर्क- maipanchami@gmail.com

जीवन की संभावना है-दरारों में उगी दूब

अपनी मौलिक पहचान बनाती हुई प्रतिष्ठित कवयित्री चित्रा देसाई का काव्य संग्रह ' दरारों में उगी दूब ' प्रकृति के उस उन्मेष की संकल्पना है जहाँ विघटनकारी स्थितियों के बाद भी जीवन की संभावना बरकरार रहती है। वे स्वयं लिखती हैं 'जहाँ कुछ दरकता है, वहाँ कुछ पनपता भी है '

काव्य संग्रह के चार खंड 'पगडंडी', 'अलाव ',आरोह-अवरोह, 'मध्यांतर के बाद ' जीवन के रास्ते में होने वाले उतार -चढाव, सुख -दुख की सेंक और ठहराव की गाथा सहज ही बयां करते हैं। सुकून का एहसास होता है इन कविताओं को पढ़ते हुए। ऐसी कविताएँ जो सीधे मन पर दस्तक देते हुए सरलता से हृदय में उतर जाती हैं और जिनका प्रभाव दीर्घकालिक होता है।

क्षिति,जल, पावक, गगन जैसे अवधारणा को रेखांकित करती हुई कविताएँ जैसे '

'....धरती का सारा विष पीकर

कितना ऊपर उठ गया

आकाश !'

या जैसे.. ' जिसका कोई नहीं होता -

उसकी जमीन होती है '

या '...हमारे शहर की हवा बहुत बोलती है।

जीवन के पंच तत्व को समेटे ये पंक्तियाँ ऊर्जा का संचार

करती प्रतीत होती हैं। वहीं मिट्टी की सोंधी महक की अनुभूति होती है जब वे कहती हैं-

" ..खुरपी की पकड़

खदानों की मिट्टी

और गोबर से लिपटे

हाथों का खुरदुरापन

तुम नहीं समझोगे "

माँ के प्रति उनका अगाध स्नेह सर्वथा नवीन उपमान की भांति चित्रित होता हुआ चकित करता है कि माँ किस तरह प्रति क्षण संकटमोचन की भांति जीवन के कठोर रास्तों को सुगम बना देती है

"माँ को एक महाकाव्य सा

संजो कर रखा है....

सहमती हूँ

तो हथेलियों के बीच इस किताब को

हनुमान चालीसा सा पढती हूँ। "

अपनी निजता,अपना अस्तित्व बना कर रखना कितना ज़रूरी है इसे बड़े ही सटीक रूप में आपने लिखा है

"अपने भीतर

आग सहेज कर रखना

तो ही बन पाओगी

वर्ना पूरी उम्र

मिट्टी ही रह जाओगी

पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के बीच अंतर्द्वंद्व और उस पीढ़ी का स्वयं को श्रेष्ठ बताना, व्यंग्यात्मक पंक्तियों द्वारा संग्रह में व्यक्त हुआ है

' हम पहले बहुत अच्छे थे

कितने युद्ध लड़े

काटे पेड़. ......पर हम पहले बहुत अच्छे थे। '

व्यंग्य की प्रतिध्वनि मद्धम ही है क्योंकि दूब की कोमलता, ,स्निग्धता से काव्य संग्रह आवृत है। हृदय अतिशय विगलित होता है जब ये पंक्तियाँ आँखों से

गुज़रती हैं

' बीते क्षण/ फैलते अंधेरे में/ जुगनू सा चमकते हैं/वैराग्य की धरती पर फिर से/ मोह बन उपजते हैं। "

' विरासत ' जैसी कविता बनी बनाई परिपाटी से इतर एक नए क्षितिज की ओर अग्रसर करती है।

स्त्रियों को विरासत में दी जाती है सहन शक्ति और हर हाल में निबाह करने की हिदायत लेकिन चित्रा जी की यह कविता की भंगिमा कुछ अलग है-

विरासत में मिलता है

चूल्हा-चौका/ बर्तन साड़ियाँ...

कानों में फुसफुसाती सीख

हर हाल में...

रहने की हिदायत/ नुकीले शब्द सहने की कला

पर मा ने...

ऐसी विरासत से/ मुझे बेदखल कर दिया था।

उच्चतम न्यायालय की अधिवक्ता होने के कारण कचहरी की पीड़ा को भी आपने गहराई से मापा है जैसे - '...जज की कलम से/फैसलों में रिसते हैं/कुछ रिश्ते सचमुच बड़े बदनसीब होते हैं '...

शब्द की अर्थवत्ता बहुत महत्वपूर्ण होती है। शब्द जीवन को प्रेममय बना सकते हैं या जीवन मे विष घोल कर उसे दुसह्य बना सकते हैं, इस भाव की सशक्त अभिव्यक्ति चित्रा जी कुछ इस तरह करती हैं

"अयोध्या में

नहीं हुआ युद्ध

शब्दों ने दिया वनवास

....

शब्दों की हिंसा

असहनीय होती है

चित्रा देसाई का यह काव्य संग्रह विभिन्न मनोभावों को सहज ही समेटे है उसमें शिल्प की कठोरता नहीं वरन् गहन संवेदनाएं हैं जो रस की निष्पत्ति स्वतः ही करती हैं और अपूर्व आनंद की सृष्टि करती हैं ' आग्रह, संपादन, न्यौता. ..ऐसी अनेक कविताएँ हैं। 'वर्णमाला'कविता में वे कहती हैं

' अब मिले हो तुम/शायद छूट गया था/कोई शब्द/मेरी वर्णमाला का...'

चित्रा देसाई की वर्णमाला का भंडार अक्षय हो जिससे ऐसी सुन्दर सौम्य कविताएँ हमें पढने को मिलती रहें।

****

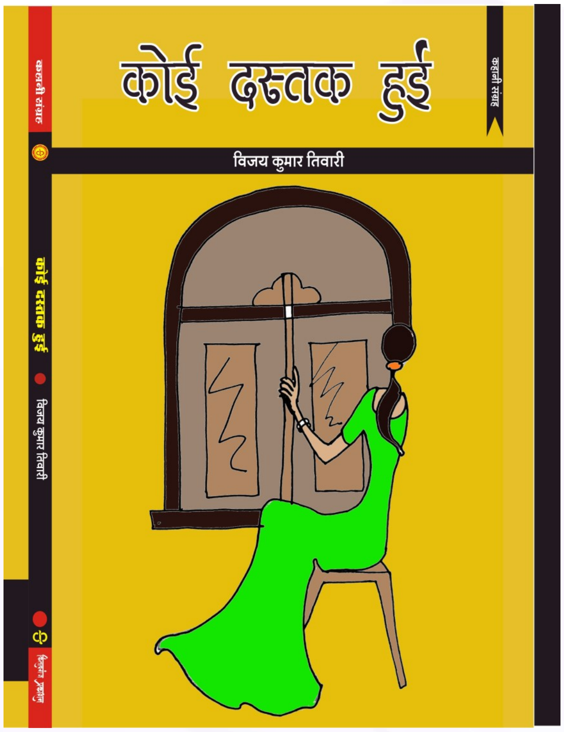

पुस्तक समीक्षा- कोई दस्तक हुई (कहानी संग्रह)

लेखक– विजय कुमार तिवारी

प्रकाशक- किताबगंज प्रकाशन

समीक्षक- अनिमा दास , भारत

संपर्क- animadas341@gmail.com

कोई दस्तक हुई

कहानी लेखन एक अनन्य शिल्प होता है। कहानीकार सत्यता के आधार पर कल्पना की अट्टालिका गढ़ता है। उसे चतुर्पार्श्व की घटनाओं से पात्र मिलता है तथा भाव भी। अद्भुत शिल्प है! किसी भी पाठक के मन की अभिव्यक्तियों को कहानीकार नीरव मुहूर्त में करता है अपहृत। ऐसा कुछ किया है कवि समीक्षक तथा कहानीकार विजय जी ने। वह कहते हैं- "ये समस्त कहानियाँ मेरे जीवन के कई महत्वपूर्ण क्षणों से जड़ित हैं, यूँ कहिए कि अंश हैं।" उनके कार्यकाल में जहाँ-जहाँ उनका स्थानांतरण हुआ वहाँ-वहाँ एक कहानी का जन्म हुआ। उनकी लेखनी से निस्सृत ये कहानियाँ आज हम पाठकों को कई अनुभूतियों से जोड़ती भी हैं।

इस कहानी संग्रह में नौ कहानियाँ हैं, जो पाठकों को केवल आत्मसंतोष ही नहीं प्राकृतिक जीवन शैली से जो कि इस आधुनिकता में विलुप्त हो चुकी है, परिचित भी कराती हैं।

पुस्तक का वाह्य आवरण जितना कलात्मक है उतना ही उच्च कोटि के विचारों को भी परिभाषित करता है जो पृष्ठबद्ध कहानियों में है।

यह यात्रा आरंभ होती है शीर्षक कहानी 'कोई दस्तक हुई'

से। जिसमें लेखक एक यत्नशील सामाजिक प्राणी सा नैतिक आदर्शों का प्रेम पूर्वक उल्लेख करता है। प्रेम केवल भौतिक अथवा स्वार्थ निहित तथा क्षणिक नहीं होता.. यह आधार स्थापित करते हैं कहानी-शिल्पी विजय जी। स्वयं की अनुभूति में ईश्वरीय इच्छा का स्थान है अर्थात् सदैव एक आध्यात्मिक आकर्षण है.. यह अभिव्यक्त किया है। कहानी को आरंभ से पढ़ते हुए इसकी अंतरात्मा जटिलता को स्पर्श करते-करते सरल होती जाती है एवं अंत होता है सुखद एवं शांतिपूर्ण।

वैसे लेखक का मुख्य लक्ष्य है... मनुष्य स्वयं आनंदित रहे एवं परिवार तथा परिवेश को भी आनंदित रखे। एक सम्पूर्ण सहज जीवन हेतु एक ही मंत्र देते हैं कि प्रेम ही जीवन यापन का आधार होना आवश्यक है। सांसारिक होते हुए भी ऊर्ध्व उठकर दैवीय ज्ञान से परिपूर्ण उनके कथ्य इन कहानियों में परिलक्षित होते हैं।

कहानी 'आत्मबोध' में विजय जी ने उस सत्यता को उल्लेखित किया है... जिस पर हमने विचार करने हेतु जीवनभर समय नहीं दिया.. अपितु हम ही उस समय को जीवन में आने नहीं देते। इस कहानी में लेखक ने प्रत्येक पीढ़ी के पाठकों का न केवल ईश्वरीय मार्गदर्शन किया है...अपितु संसार में होते प्रत्येक दुराचार एवं वीभत्स रूप का कारण हमारे भीतर तांडव करती कलुषित, पथभ्रष्ट आत्माएँ ही हैं.. यह प्रमाणित भी किया है। कहानी के अंत में मानव स्वयं के नित प्रतिदिन की जीवन शैली में सतकर्म करने की प्रेरणा दी है एवं कहा है कि यह संक्रमण काल है.. शक्तियाँ एकत्रित हो रही हैं.. विवेक एवं सम्मत मार्ग पर चलते रहो।

वास्तव में, इस आधुनिकवाद युग में कहानी के चरित्रों में सात्विक प्रेम भरते हुए आध्यात्मिक स्तर पर जाना एवं पाठकों को अविस्मरणीय विचार दे जाना अत्यंत मुग्धकारी कला है।

मुझे अन्य एक कहानी 'जीवन यात्रा का सच' अत्यंत प्रभावित करती है। युवा पीढ़ी हो अथवा मध्य वयस्क.. सभी इस कहानी के अंतर्निहित ज्ञान का आहरण करें तो इस कहानी का जन्म सफल हो पाएगा। समग्र कहानी में, प्रेम का अर्थ केवल समर्पण है एवं यह समर्पण प्राकृतिक है जिसे

कहानीकार अत्यंत सुंदर सरल एवं सहज शब्द तथा भाव में अभिव्यक्त करते हैं। नदी से कैसे समर्पित होने की एवं वस्तुपरक न होते हुए निस्वार्थ प्रेम में लीन हो जाने की शिक्षा देते हुए इस कहानी को गूँथकर लेखक ने पाठक मन को अभिभूत किया है।

सभी कहानियों में भावों की निरंतरता रही है। मधुरता भी है मृदुलता भी है एवं समस्त कहानियाँ विजय जी के जीवन की वास्तविक घटनाओं से संबंधित हैं, इसलिए कोई अतिशय उक्ति नहीं अथवा काल्पनिक चरित्र चित्रण नहीं। वर्णन में एवं विचारों में भटकाव भी नहीं है। पढ़ते हुए ऐसा लगा कि प्रत्येक कहानी केवल प्रेरणाप्रद ही नहीं उच्च स्तर की आलौकिक ध्वनि है। प्रवाह के साथ-साथ सरल एवं सुबोध भाषा का प्रयोग अवश्य पाठकों को आत्मसुख प्रदान करेगा।

पाठकों से निवेदन है कि इस संग्रह को अवश्य पढ़ें एवं मानवीय मूल्यबोध को अवश्य जानें।

शुभकामनाओं सहित....

****

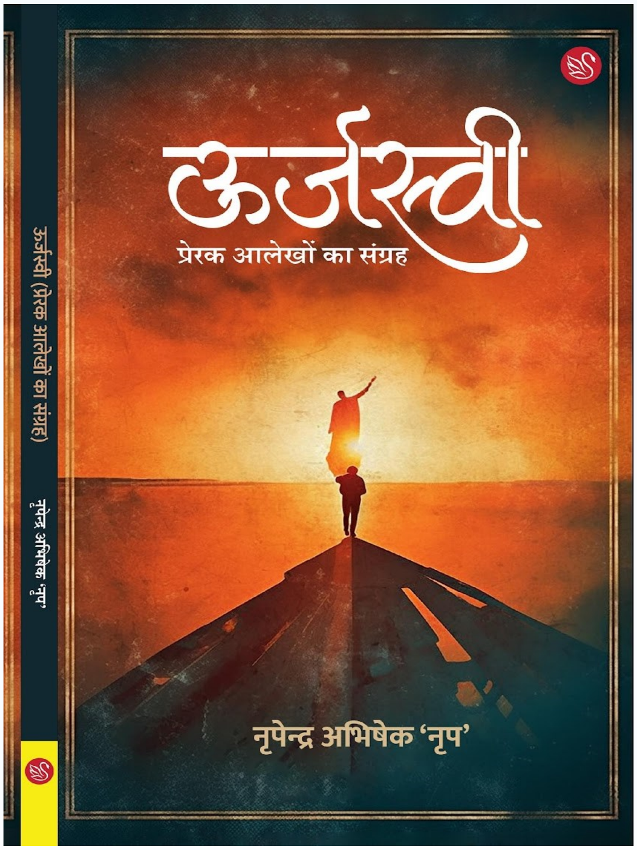

पुस्तक समीक्षा- ऊर्जस्वी (आलेख संग्रह)

लेखक– नृपेन्द्र अभिषेक नृप

प्रकाशक- स्वेतवर्णा प्रकाशन, नयी दिल्ली

समीक्षक- मोनिका राज , भारत

नालंदा महाविहार में शोधार्थी

संपर्क- monikarajphd@gmail.com

जीवन को जीने की सीख देती पुस्तक "ऊर्जस्वी"

व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक रिश्तों से जूझते मन को उभारने और दुनियारूपी सागर में हिचकोले खाते नाव को पार लगाने के लिए जिस ज्ञान की ज़रूरत होती है, उस ज्ञान रूपी मोती को ऊर्जस्वी रूपी माला में पिरोने का कार्य किया है नृपेंद्र अभिषेक नृप जी ने।

'ऊर्जस्वी' का शाब्दिक अर्थ है- "ऊर्जा से परिपूर्ण" और नृपेंद्र अभिषेक नृप जी की यह पुस्तक अपने इस नाम को सार्थक करती प्रतीत होती है। हालाँकि नृप जी पिछले पच्चीस वर्षों से लेखन क्षेत्र में सक्रिय रहे हैं परंतु पुस्तक-लेखन के क्षेत्र में उनका पदार्पण अभी-अभी हुआ है। हिंदी पुस्तक लेखक के तौर पर यह उनकी पहली पुस्तक है।

इस पुस्तक का एक-एक आलेख सकारात्मक ऊर्जा से ओत-प्रोत है। इस पुस्तक का प्रत्येक आलेख आपको जीवन में होने वाली अनेक परेशानियों से निकलने का सार्थक समाधान देने का भरपूर प्रयत्न करता है। यह पुस्तक कुल बत्तीस आलेखों का संग्रह है। इन आलेखों के माध्यम से लेखक ने बेहतरीन लेखन-शैली के साथ गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। आलेख लेखन में प्रयुक्त एक-एक शब्द अपने अंदर गहरे भाव समेटे हुए है।

संपूर्ण पुस्तक में नृप जी का चिंतनशील व्यक्तित्व उपस्थित

है। सभी रचनाओं में लेखक की विभिन्न विचारधाराओं का परिचय मिलता है। लेखक की दृष्टि में उसके आलेख केवल कल्पना विलास नहीं बल्कि जीवन को मथ कर निकाला हुआ सार है। बुद्ध का कथन है-"जीवन में हज़ारों लड़ाइयाँ जीतने से बेहतर है स्वयं पर विजय प्राप्त करना।" उनका मानना है कि बुराई को बुराई से पराजित नहीं किया जा सकता। नृप जी के अनेक आलेख बुद्ध के विचारों की पुष्टि करते प्रतीत होते हैं।

लेखक द्वारा प्रत्येक आलेख का चयन बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया गया है, जो इस पुस्तक को विशेष बनाता है। इस पुस्तक के एक-एक शब्द जादुई प्रतीत होते हैं। प्रत्येक आलेख के भाव की चुम्बकीय शक्ति से खींचा मन इसे पढ़ते हुए आनंद के सागर में गोते खाने लगता है। बस एक बार इस पुस्तक को हाथ मे लेने भर की देर है। इसकी लेखन शैली से वशीभूत मन कब पूरी पुस्तक को समाप्त कर देता है, इसका भान ही नही होता। प्रत्येक आलेख एक बेहतरीन संदेश देने के साथ-साथ हमारे मन मे उठ रहे अनेक प्रश्नों, शंकाओं का निवारण करते हुए हमें आत्मिक तृप्ति की ओर ले जाता है। एक ही जगह तमाम मानसिक दुविधा एक साथ हल होती मालूम पड़ती है।

स्वार्थ साधन के लिए न बनें अनैतिक, सांच को आंच नहीं, भावनाओं पर काबू रखने की ज़रूरत, शक से कमज़ोर होती रिश्तों की डोर, मानवता से ही श्रेष्ठ बनता है मनुष्य, ज़रूरी है परिवार का साथ, गुणी इंसान बनें अहंकारी नहीं आदि जैसे अनेकानेक ज्ञानवर्धक आलेखों से सुसज्जित इस पुस्तक को पढ़ना अपने ज्ञानकोश में वृद्धि करने के समान है। सरल भाषा और व्याकरणिक शुद्धियाँ इस पुस्तक की मेरुदंड हैं।

नृप जी के अधिकारपूर्ण भाषा में यथावांछित विविधता है, जिसमें जीवन का सत्य भी है और भविष्य की योजना भी। किसी निबंध या आलेख में भाषा वह विश्वसनीय तत्व है जो किसी युग के लिए परिवर्तनीय प्रतिमान को सबसे पहले निर्देशित कर देती है। यहाँ भी प्रत्येक आलेख में लेखक का आत्मचिंतन प्रत्येक के लिए अनुकरणीय बनता दिखाई दे रहा है क्योंकि इसमें एक वैश्विक चिंतन है और चेतना भी।

यह पुस्तक यूपीएससी की परीक्षा के साथ-साथ निजी ज़िन्दगी में नैतिक शिक्षा की ज़रूरत को भी पूरा करेगी। इस बेहतरीन मुद्दे पर पुस्तक लेखन के लिए लेखक को हार्दिक बधाई एवं अनंत शुभकामनाएँ। आशा है कि यह पुस्तक पढ़कर पाठकगण अवश्य लाभान्वित होंगे।

****

आपके विचार और प्रतिक्रियाएँ सादर आमंत्रित हैं:

sangam.singapore@gmail.com